॥ पुष्टिपाठावली ॥

जय श्रीकृष्ण

श्रीवल्लभाधीशो जयति

प्रकाशक :
श्रीवल्लभाचार्य ट्रस्ट, मांडवी-कच्छ

प्रकाशक:
श्रीवल्लभाचार्य ट्रस्ट,
कंसारा बजार, मांडवी–कच्छ,
गुजरात, ३७०४६५
फोन : (०२८३४)२३१४६३, (०)९४२६९३२३००
(फोन सम्पर्क : प्रातः १० से १ और सायं ४ से ७ के बीच)
gosharad@rediffmail.com

http://www.vallabhacharyavidyapeeth.org/
www.pushtimarg.net

द्वितीय संस्करण : वि.सं. २०७०

प्रति : ३०००

ग्रन्थप्रकाशन सहाय : २०/

मुद्रक : पूर्वी प्रेस, राजकोट

श्रीवल्लभाचार्य ट्रस्ट, मांडवी–कच्छ

ग्रन्थप्रकाशन :

साम्प्रदायिक परीक्षाकी पाठ्यपुस्तकें:

१. प्रवेशिका, लेखक: गो.शरद् (गुजराती)	१०
२. प्रवेशिका, लेखक: गो.शरद् (हिन्दी)	नि:शुल्क
३. प्रवेशिका, लेखक: गो.शरद् (अंग्रेजी)	नि:शुल्क
४. पुष्टिप्रवेश–१, लेखक: गो.शरद् (गुजराती)	१०
५. पुष्टिप्रवेश–२, लेखक: गो.शरद् (गुजराती)	१०
६. पुष्टिप्रवेश–१–२, लेखक: गो.शरद् (हिन्दी)	१०
७. पुष्टिपथ, लेखक: गो.शरद् (गुजराती)	२०
८. पुष्टिपथ, लेखक: गो.शरद् (हिन्दी)	२०
९. प्रमेयरत्नसंग्रह, लेखक: गो.शरद् (गुजराती)	२०
१०. Manual of the Devotional Path of Pushti, गो.शरद्	६५

साम्प्रदायिक विचारगोष्ठी

श्रीवल्लभाचार्य ट्रस्ट द्वारा समायोजित साम्प्रदायिक विचारगोष्ठीमें प्रस्तुत हुवे
विभिन्न शोधपत्र तथा उनपर हुई विशद चर्चा का संग्रह

११. वार्तापरिचर्चा	१५
१२. साधनाप्रणाली संगोष्ठी	५०
१३. अधिकारपरिचर्चा	१००
१४. पुष्टिभक्तिमें कथासाधना संगोष्ठी	५०
१५. शरणागति विचारगोष्ठी	५०
१६. सेवा–समर्पण विचारगोष्ठी	५०
१७. शरणागति विचारगोष्ठी एक पूरक प्रश्नोत्तरी(गुजराती)	नि:शुल्क
१८. पुष्टिभक्ति तथा प्रपत्तिमें प्रतिबन्ध	१००
१९. जघन्याधिकार	८०
२०. पुष्टिफलमीमांसा	१००

तत्त्वदर्शन विषयक राष्ट्रीय सेमिनार

श्रीवल्लभाचार्य ट्रस्ट द्वारा समायोजित तत्त्वदर्शन विषयक राष्ट्रीय सेमिनारमें प्रस्तुत हुवे
विभिन्न शोधपत्र तथा चर्चा का संग्रह (संस्कृत–हिन्दी–अंग्रेजी)

२१. शब्दखण्डीया विद्वत्परिचर्चा	२००
२२. अन्यख्यातिवादीया विद्वत्सङ्गोष्ठी	१५०
२३. कार्यकारणभावविद्वत्सङ्गोष्ठी	२००
२४. प्रत्यक्षप्रमाण विद्वत्सङ्गोष्ठी	१५०
२५. अन्धकारवादीया विद्वत्सङ्गोष्ठी	२००
२६. वाल्लभवेदान्त निबन्धसंग्रह, लेखक : गो. श्रीश्याम मनोहरजी	निःशुल्क

नित्यस्तोत्रपाठ:

२७. पुष्टिपाठावली (हिन्दी)	२०
२८. पुष्टिपाठावली (गुजराती)	१०
२९. पुरुषोत्तमसहस्रनाम-त्रिविधलीलानामावली(गुर्जरभाषानुवाद)	२०

सन्दर्भग्रन्थ:

३०. पुष्टिविधानम् पादानुक्रमणिका	१०
३१. Summary of Shuddhadvaita Vangmaya, लेखक: गो.शरद	१५
३२. अमृत वचनावली (गुजराती)	निःशुल्क
३३. अमृत वचनावली (हिन्दी)	निःशुल्क
३४. पुष्टिअस्मिता संवर्धन शिविर, राष्ट्रीय संमेलन, भरूच	२५

अध्ययनोपयोगी ग्रन्थ:

३५. पुष्टिविधानम्-२(व्याकरणम्)श्रीवल्लभाचार्य-श्रीगोपीनाथजी-श्रीगुसांईजी विरचित २६ ग्रन्थोंका पदच्छेद-अन्वय-शब्दपरिचय-वृत्तिपरिचय	१००
३६. पुष्टिविधानम्-३(व्रजभाषा)श्रीवल्लभाचार्य-श्रीगोपीनाथजी-श्रीगुसांईजी विरचित २६ ग्रन्थोंका शब्दार्थ-श्लोकार्थ-विवेचन-पादानुक्रमणिका	१५०
३७. तत्त्वार्थदीपनिबन्धान्तर्गत शास्त्रार्थप्रकरणम्, (व्रजभाषाटीका)	५०/७०
३८. तत्त्वार्थदीपनिबन्धान्तर्गत सर्वनिर्णयप्रकरणम् (व्रजभाषाटीका)	८०/१००
३९. श्रीभागवतमहापुराण, चार खण्डमें (गुर्जरभाषानुवाद)	४००
४०. विवेकत्रयम्, प्रपञ्च-जीव-मूलरूप (संस्कृत)	१०
४१. गृहसेवा-व्रजलीला(व्रजभाषा)व्याख्यात: गो.श्रीश्याम मनोहरजी	निःशुल्क
४२. गृहसेवा-व्रजलीला(गुजराती)व्याख्याता: गो.श्रीश्याम मनोहरजी	अप्राप्य
४३. पुष्टिप्रवाहमर्यादाभेद, व्याख्याता: गो.श्रीश्याम मनोहरजी(गुजराती)	अप्राप्य
४४. श्रीगोपीनाथप्रभुचरण, जीवनचरित्र-ग्रन्थ-हस्ताक्षर(गुज.-हिन्दी)	२५

४५. **श्रीकृष्णचरित्र**(दशमस्कन्ध गुर्जर-भावानुवाद): गो.वा.श्रीनानुलाल गांधी	अप्राप्य
४६. **श्रीमद्भगवद्गीता,** गुर्जरभाषानुवाद, अनुवादक: पूर्ववत्. श्लोकार्थ-विवेचन पादानुक्रमणिका. गीतातात्पर्य-न्यासादेशविवरण गुजराती अनुवाद सहित	५०
४७. **रसदृष्टिनी तरफेणमां**(गुजराती), लेखक : गो.श्रीश्याम मनोहरजी	निःशुल्क
४८. **सिद्धान्तनुं आचमन, प्रश्नोत्तर**(गुज.)उत्तरदाता: गो.श्रीश्याम मनोहरजी	निःशुल्क
४९. **जिन श्रीवल्लभरूप न जान्यो** (गुजराती) गो.श्रीश्याम मनोहरजी लिखित श्रीवल्लभ महाप्रभुस्तोत्राणि ग्रन्थकी विस्तृत हिन्दी भूमिकाका गुर्जरभाषानुवाद तथा सौंदर्यपद्य, सर्वोत्तमस्तोत्र, वल्लभाष्टक, स्फुरत्कृष्णप्रेमामृत, श्रीहरिरायचरण रचित श्रीवल्लभस्तोत्र, पंचश्लोकी, शिक्षाश्लोकी आदि ग्रन्थोंकी टीकाओंका गुजराती अनुवाद.	७०
५०. **सेवाकौमुदी**(हिन्दी), विषय : नवधाभक्ति, लेखक : श्रीलालूभट्टजी, व्याख्याता : गो.श्रीश्याम मनोहरजी	अप्राप्य
५१. **ब्रह्मवाद** (हिन्दी) लेखक : गो.श्रीश्याम मनोहरजी	निःशुल्क
५२. **भक्तिवर्धिनी(गुज.),** व्याख्याता : गो.श्रीश्याम मनोहरजी	निःशुल्क
५३. **सेवा** हिन्दी (ऋतु-उत्सव-मनोरथ) व्याख्याता : गो.श्रीश्याम मनोहरजी	निःशुल्क
५४. **सेवा** गुज. **(ऋतु-उत्सव-मनोरथ)** व्याख्याता : गो.श्रीश्याम मनोहरजी	निःशुल्क
५५. **षोडशग्रन्थगत उपदेशो अने तेमनी २८ वार्ताओ,** लेखक : श्रीभूपेन्द्र भाटीया	४०
५६. **षोडशग्रन्थगत उपदेशो अने तेमनी ६४ वार्ताओ,** लेखक : श्रीभूपेन्द्र भाटीया	४०
५७. **कृष्णाश्रय,** श्रीकल्याणरायजी विरचित संस्कृत टीकानो गुजराती अनुवाद	०७
५८. **पुरुषोत्तमग्रन्थावली खण्ड ५** (संस्कृत-गुज.-हिन्दी, द्रव्यशुद्धि-व्रतोत्सवनिर्णय-अपराधनिरूपण)	१००
५९. **पुरुषोत्तमग्रन्थावली खण्ड ६**(संस्कृत, उपनिषद्-गीताविवृति)	२००

इतिहास

६०. आधुनिक न्यायप्रणाली अने पुष्टिमार्गीय साधनाप्रणालीनो आपसी टकराव गुज., लेखक : गो.श्रीश्याम मनोहरजी	निःशुल्क
६१. आधुनिक न्यायप्रणाली और पुष्टिमार्गीय साधनाप्रणालीका आपसी टकराव हिन्दी., लेखक : गो.श्रीश्याम मनोहरजी	निःशुल्क

चित्र

महाप्रभु श्रीवल्लभाचार्य	निःशुल्क

श्रीगोपीनाथप्रभुचरण निःशुल्क
श्रीवल्लभाचार्य–श्रीगोपीनाथप्रभुचरण–श्रीविट्ठलनाथप्रभुचरण निःशुल्क

गोशाला

जीर्णोद्धार : तृतीय लालजी श्रीबालकृष्णजीके बैठकजी,
गाम : विंजाण–कच्छ

हस्तलिखित ग्रन्थोंका संग्रह–संरक्षण; पुस्तकालय

शुद्धाद्वैत पुष्टिभक्तिमार्गीय वाङ्मय :

शुद्धाद्वैत पुष्टिभक्तिमार्गके आधारभूत संस्कृत–व्रज–गुजराती आदि भाषामें लिखित मूल गद्य–पद्य ग्रन्थसाहित्य, उनका अनुवाद एवं उनके ऊपर लिखित विवेचन आदिका (साम्प्रदायिक शब्दकोश, साम्प्रदायिक वचनानुक्रमणिका, भगवद्गीतापादानुक्रमणिका आदि सहित अध्ययनोपयोगी साहित्यका) बृहत् संग्रह. डाउनलोड् एवं मार्गदर्शन केलिये लिंक :

http://www.pushtimarg.net/pushti/pushti-vangmay.html

वर्तमानमें शुद्धाद्वैत पुष्टिभक्तिमार्गीय वाङ्मयमें उपलब्ध ग्रन्थ :

षोडशग्रन्थ (सभी संस्कृत टीका, हिन्दी ग्रन्थपरिचय, गुजराती अनुवाद सहित)
तत्त्वार्थदीपनिबन्ध
–शास्त्रार्थप्रकरण (टिप्पणी–आवरणभङ्ग–योजना–सत्स्नेहभाजन, अनु.= गुज.–व्रज)
–सर्वनिर्णयप्रकरण(संस्कृत टीका = टिप्पणी–आवरणभङ्ग, अनु. =व्रजभाषा)
–भागवतार्थप्रकरण(सभी संस्कृत टीकाएं)
ब्रह्मसूत्राणुभाष्य
मधुराष्टकम्(सभी संस्कृत टीकाएं
पुरुषोत्तमनामसहस्रम्(सभी संस्कृत टीकाएं)
सुबोधिनी (स्कन्ध १ तथा २ संस्कृत)
विद्वन्मण्डनम् (मूल तथा गुजराती अनुवाद)
शिक्षापद्यानि (सभी संस्कृत टीकाएं)
परिवृढाष्टकम् (सभी संस्कृत टीकाएं)
त्रिविधनामावली (सभी संस्कृत टीकाएं)
सेवाश्लोका
सौन्दर्यपद्य (व्रजभाषा टीका)
साधनदीपिका (मूल तथा व्रजभाषा तथा गुजराती अनुवाद)
पुरुषोत्तमप्रतिष्ठाप्रकार(मूल–संस्कृतटीका–हिन्दी अनुवाद)
श्रीभागवतपुराण(स्कन्ध १–७, १०,११ मूल तथा हिन्दी–गुजराती अनुवाद)
श्रीहरिरायवाङ्मुक्तावली(५५ ग्रन्थ, मूल तथा गुजराती अनुवाद)
द्रव्यशुद्धि (मूल तथा गुजराती–व्रजभाषा अनुवाद)
८४ वैष्णववार्ता (मूल–भावप्रकाश, व्रजभाषा)

२५२ वैष्णववार्ता (मूल–भावप्रकाश, व्रजभाषा)   **४१ शिक्षापत्र** (मूल तथा व्रजभाषा टीका)
प्रस्थानरत्नाकर   **अवतारवादावली खंड २, ३**   **वादावली**
भगवद्गीतामृततरंगिणी   **वल्लभाष्टकम्**   **सर्वोत्तमस्तोत्रम्**

श्रीवल्लभाचार्य विद्यापीठ : शीघ्र ही कार्यरत होने जा रही यह विद्यापीठ अध्ययनोपयोगी ग्रन्थालय, अध्ययनकक्ष, निवास, भोजन, अध्यापक आदि अत्यावश्यक सुविधाओंसे सुसज्ज होगी. विशेष जानकारीकेलिये : http://www.vallabhacharyavidyapeeth.org/

पुष्टिस्वाध्याय: सप्ताहके प्रायः सभी दिन आबाल–वृद्ध सभी पुष्टिमार्गीओं केलिये सम्प्रदायके मूल ग्रन्थोंका अध्यापन विद्वान् आचार्यवंशजों द्वारा तीन माध्यमोंसे होता है: १.टेलिफोनिक कोन्फरन्स्, २.इंटर्नेट् द्वारा लाईव् ऑडियो तथा ३. इंटर्नेट् द्वारा लाईव् वीडीयो कोन्फरन्स्.

विशेष जानकारीकेलिये फोनसम्पर्क–   योगेन्द्र: (+91) 932373379
पिनाकीन:(+91)9726444515.   नीरज(यु.एस्.ए.):+7325424165
ईमेलसम्पर्क: pushtiswadhyay@gmail.com.

पुष्टिस्वाध्याय समयतालिका

वार		**समय**	**विषय**
रवीवार:	मध्याह्न	०२ : ३०से	सर्वनिर्णय
	सायं	०४ : ३०से	षोडशग्रन्थ
सोमवार:	रात्रि	०८ से	श्रीपुरुषोत्तमनामसहस्रम्
बुध:	रात्रि	०८ से	सर्वनिर्णयप्रकरणम्
गुरुवार:	सायं	०४ से	षोडशग्रन्थ
गुरुवार:	रात्रि	०८ से	सर्वनिर्णयप्रकरणम्
शुक्र–शनिवार:	रात्रि	०८ से	बालपुष्टि–षोडशग्रन्थ

अनुक्रमणिका

मङ्गलाचरणम् १
श्रीसर्वोत्तमस्तोत्रम् ३
श्रीवल्लभाष्टकम् ७
श्रीस्फुरत्कृष्णप्रेमामृतस्तोत्रम् ९
नामरत्नाख्यस्तोत्रम् १२
षोडशग्रन्थमाहात्म्यम् १५
श्रीयमुनाष्टकम् १६
बालबोधः १९
सिद्धान्तमुक्तावली २१
पुष्टिप्रवाहमर्यादाभेदः २५
सिद्धान्तरहस्यम् २८
नवरत्नम् ३०
अन्तःकरणप्रबोधः ३१
विवेकधैर्याश्रयः ३३
कृष्णाश्रयः ३६
चतुःश्लोकी ३८
भक्तिवर्धिनी ३९
जलभेदः ४१
पञ्चपद्यानि ४५
संन्यासनिर्णयः ४६

निरोधलक्षणम् ५०
सेवाफलम् ५३
पञ्चश्लोकी ५५
साधनप्रकरणम् ५६
शिक्षापद्यानि ६५
साधनदीपिका ६६
(द्वितीय)चतुःश्लोकी ८३

परिशिष्ट

श्रीपरिवृढाष्टकम् ८४
श्रीकृष्णाष्टकम् ८६
श्रीगिरिराजधार्याष्टकम् ८८
श्रीगोपीजनवल्लभाष्टकम् ८९
श्रीमधुराष्टकम् ९०
श्रीगोकुलेशाष्टकम् ९१
श्रीगोपीजनवल्लभाष्टकम् ९३
स्वस्वामिपाणियुगलाष्टकम् ९४
श्रीकृष्णशरणाष्टकम् ९५
पञ्चाक्षरमन्त्रगर्भस्तोत्रम् ९६
श्रीपुरुषोत्तमनामसहस्रमं स्तोत्रम् ९८
त्रिविधनामवली १२५

।। मङ्गलाचरणम् ।।

(आचार्यचरण [१]श्रीगोपीनाथ– [२]श्रीविट्ठलनाथप्रभुचरणस्वमार्गीय-ज्ञानोपदेशक गुरु[३] अरु भागवतदशमस्कन्धार्थरूप भगवान्[४] कों वन्दन)

चिन्ता–सन्तान–हन्तारो यत्–पादाम्बुज–रेणवः ।।
स्वीयानां तान् निजाचार्यान् प्रणमामि मुहुर् मुहुः[१] ।।१।।
यदनुग्रहतो जन्तुः सर्वदुःखातिगो भवेत् ।।
तमहं सर्वदा वन्दे श्रीमद्–वल्लभ–नन्दनम्[२] ।।२।।
अज्ञान–तिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जन–शलाकया ।।
चक्षुर् उन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः[३] ।।३।।
नमामि हृदये शेषे लीला–क्षीराब्धि–शायिनम् ।।
लक्ष्मी–सहस्र–लीलाभिः सेव्यमानं कलानिधिम् ।।४।।
चतुर्भिश्च चतुर्भिश्च चतुर्भिश्च त्रिभिस् तथा ।।
षड्भिर् विराजते योऽसौ पञ्चधा हृदये मम[४] ।।५।।

(महाप्रभु[१-८] तथा प्रभुचरण[९-१०] द्वारा प्रादुर्भावित स्वरूपन्को ध्यान)

श्रीगोवर्धननाथ[१]–पादयुगलं हैयङ्गवीन–प्रियं[२]
नित्यं श्रीमथुराधिपं[३] सुखकरं श्रीविट्ठलेशं[४] मुदा ।।
श्रीमद्द्वारवतीश[५]–गोकुलपती[६] श्रीगोकुलेन्दुं[७] विभुं
श्रीमन्मन्मथमोहनं[८] नटवरं[९] श्रीबालकृष्णं[१०] भजेत् ।।६।।

(श्रीमहाप्रभु–श्रीप्रभुचरण[१] सात बालक अरु तिनके वंशज[२] श्रीयमुनाजी[३] ब्रह्मसम्बन्धदाता गुरु[४] श्रीगिरिराजजी[५] निजगुरुन्के सेव्य[६] तथा

अपने माथे बिराजते प्राणप्रिय सेव्यप्रभु[७] को ध्यान)

श्रीमद्वल्लभ–विट्ठलौ[१] गिरिधरं गोविन्दरायाभिधं
श्रीमद्बालकृष्ण–गोकुलपती नाथं रघूणांस्तथा।।
एवं श्रीयदुनायकं किल घनश्यामं च तद्वंशजान्[२]
कालिन्दिं[३] स्वगुरुं[४] गिरिं[५] गुरुविभुं[६] स्वीयप्रभूं[७]श्च स्मरेत्।७।

(भागवतदशमस्कन्धके प्रमेयप्रकरणमें निरूपित प्रमेयरूप भगवान्‌को ध्यान)

बर्हापीडं नटवर–वपुः कर्णयोः कर्णिकारं
बिभ्रद् वासः कनक–कपिशं वैजयन्तीं च मालां।।
रन्ध्रान् वेणोर् अधर–सुधया पूरयन् गोप–वृन्दैः
वृन्दारण्यं स्वपद–रमणं प्राविशद् गीतकीर्तिः।।८।।

(श्रीमदाचार्यचरणके त्रितयात्मक स्वरूपको ध्यान)

सौन्दर्यं निजहृद्गतं प्रकटितं स्त्री–गूढ–भावात्मकं
पुंरूपं च पुनस् तदन्तर्गतं प्रावीविशद् स्वप्रिये ।।
संश्लिष्टावुभयोर् बभौ रसमयः कृष्णो हि तत् साक्षिकं
रूपं तत्त्रितयात्मकं परमभिध्येयं सदा वल्लभम्।।९।।

(श्रीगोपीनाथप्रभुचरणको ध्यान)

श्रीवल्लभ–प्रतिनिधिं तेजोराशीं दयार्णवम् ।।
गुणातीतं गुणनिधिं श्रीगोपीनाथम् आश्रये।।१०।।

(श्रीविट्ठलनाथप्रभुचरणको ध्यान)

सायं कुञ्जालयस्थासनम् उपविलसत्–स्वर्णपात्रं सुधौतं
राजद्यज्ञोपवीतं परितनुवसनं गौरम् अम्भोजवक्त्रम्।।

---

[२] जिस पर कृपा नहीं है उसकेलिए तो पुष्टिमार्गमें आ जाने पर भी सब अशक्य है.

प्राणानायम्य नासापुट–निहितकरं कर्ण–राजद् विमुक्तं
वन्देऽर्धोन्मीलिताक्षं मृगमदतिलकं विट्ठलेशं सुकेशम्।।११।।
।। इति मङ्गलाचरणं सम्पूर्णम् ।।

।। श्रीसर्वोत्तमस्तोत्रम् ।।

(मङ्गल उपक्रमः)

प्राकृतधर्मानाश्रयम् अप्राकृत–निखिल–धर्मरूपमिति ।।
निगम–प्रतिपाद्यं यत् तत् शुद्धं साकृति स्तौमि।।१।।

(या स्तोत्रके प्राकट्यके प्रयोजनको निरूपण)

कलिकाल–तमश्छन्न–दृष्टित्वाद् विदुषामपि ।।
सम्प्रत्यविषयस् तस्य माहात्म्यं समभूद् भुवि।।२।।
दयया निजमाहात्म्यं करिष्यन् प्रकटं हरिः ।।
वाण्या यदा तदा स्वास्यं प्रादुर्भूतं चकार हि।।३।।
तदुक्तमपि दुर्बोधं सुबोधं स्याद् यथा तथा ।।
तन्नामाष्टोत्तरशतं प्रवक्ष्याम्यखिलाघ–हृत्।।४।।

(या स्तोत्रके ऋषि[१] छन्द[२] देव[३] बीज[४] विनियोग[५] अरु सिद्धि[६] को निरूपण)

ऋषिर् अग्निकुमारस्तु[१] नाम्नां छन्दो जगत्यसौ[२] ।।
श्रीकृष्णास्यं देवता[३] च बीजं कारुणिकः प्रभुः[४] ।।५।।
विनियोगो भक्तियोगह्नप्रतिबन्ध–विनाशने[५] ।।
कृष्णाधरामृतास्वादह्नसिद्धिर्[६] अत्र न संशयः।।६।।

आनन्दः[१] परमानन्दः[२] श्रीकृष्णास्यं[३] कृपानिधिः[४] ।।४।।
दैवोद्धार-प्रयत्नात्मा[५] स्मृतिमात्रार्तिनाशनः[६] ।।७।।
श्रीभागवत-गूढार्थह्नप्रकाशन-परायणः[७] ।।
साकार-ब्रह्म-वादैक-स्थापको[८] वेदपारगः[९] ।।८।।
मायावाद-निराकर्ता[१०] सर्ववादि-निरासकृत्[११] ।।
भक्तिमार्गाब्ज-मार्तण्डः[१२] स्त्रीशूद्राद्युद्धृतिक्षमः[१३] ।।९।।
अङ्गीकृत्यैव गोपीश-वल्लभीकृत-मानवः[१४] ।।
अङ्गीकृतौ समर्यादो[१५] महाकारुणिको[१६] विभुः[१७] ।।१०।।
अदेय-दान-दक्षश्च[१८] महोदार-चरित्रवान्[१९] ।।
प्राकृतानुकृति-व्याजह्नमोहितासुर-मानुषः[२०] ।।११।।
वैश्वानरो[२१] वल्लभाख्यः[२२] सद्रूपो[२३] हितकृत्सताम्[२४] ।।
जनशिक्षाकृते कृष्ण-भक्तिकृत्[२५] निखिलेष्टदः[२६] ।।१२।।
सर्व-लक्षण-सम्पन्नः[२७] श्रीकृष्ण-ज्ञानदो[२८] गुरुः[२९] ।।
स्वानन्द-तुन्दिलः[३०] पद्म-दलायत-विलोचनः[३१] ।।१३।।
कृपा-दृग्वृष्टि-संहृष्टह्नदास-दासीप्रियः[३२] पतिः[३३] ।।
रोषदृक्पात-सम्प्लुष्ट-भक्तद्विड्[३४] भक्तसेवितः[३५] ।।१४।।
सुखसेव्यो[३६] दुराराध्यो[३७] दुर्लभांघ्रिसरोरुहः[३८] ।।

---

[४] भूतल पर पुष्टिजीवोंको प्रभुने अपनी स्वस्रूपसेवाकेलिए प्रकट किया है.

उग्रप्रतापो[३९] वाक्सीधुह्लपूरिताशेष-सेवक:[४०] ।।१५।।
श्रीभागवत-पीयूषह्लसमुद्र-मथन-क्षम:[४१] ।।
तत्सारभूत-रास-स्त्रीह्लभाव-पूरितविग्रह:[४२] ।।१६।।
सान्निध्य-मात्र-दत्त-श्रीकृष्णप्रेमा[४३] विमुक्तिद:[४४] ।।
रासलीलैक-तात्पर्य:[४५] कृपयैतत्कथा-प्रद:[४६] ।।१७।।
विरहानुभवैकार्थह्लसर्वत्यागोपदेशक:[४७] ।।
भक्त्याचारोपदेष्टा[४८] च कर्म-मार्ग-प्रवर्तक:[४९] ।।१८।।
यागादौ भक्तिमार्गैकह्लसाधनत्वोपदेशक:[५०] ।।
पूर्णानन्द:[५१] पूर्णकामो[५२] वाक्पतिर्[५३] विबुधेश्वर:[५४] ।।१९।।
कृष्ण-नाम-सहस्रस्य वक्ता[५५] भक्तपरायण:[५६] ।।
भक्त्याचारोपदेशार्थ-नाना-वाक्य-निरूपक:[५७] ।।२०।।
स्वार्थोज्झिताखिल-प्राण-प्रियस्[५८] तादृश-वेष्टित:[५९] ।।
स्वदासार्थ-कृताशेष-साधन:[६०] सर्वशक्तिधृक्[६१] ।।२१।।
भुवि भक्ति-प्रचारैक-कृते स्वान्वयकृत्[६२] पिता[६३] ।।
स्ववंशे स्थापिताशेष-स्वमाहात्म्य:[६४] स्मयापह:[६५] ।।२२।।
पतिव्रता-पति:[६६] पारह्ललौकिकैहिक-दानकृत्[६७] ।।
निगूढ-हृदयो[६८]ऽनन्य-भक्तेषु ज्ञापिताशय:[६९] ।।२३।।
उपासनादि-मार्गातिह्लमुग्ध-मोहनिवारक:[७०] ।।

पुष्टिजीवका मुख्य धर्म है : कृष्णसेवा. अन्य धर्म उसकेलिए परधर्म या विधर्म हैं.

भक्तिमार्गे सर्वमार्ग–वैलक्षण्यानुभूतिकृत्[७१] ।।२४।।
पृथक्शरण–मार्गोपदेष्टा[७२] श्रीकृष्ण–हार्दवित्[७३] ।।
प्रतिक्षण–निकुञ्जस्थलीला–रस–सुपूरितः[७४] ।।२५।।
तत्कथाक्षिप्त–चित्तस्[७५] तद्विस्मृतान्यो[७६] व्रजप्रियः[७७] ।।
प्रियव्रजस्थितिः[७८] पुष्टि–लीलाकर्ता[७९] रहःप्रियः[८०] ।२६।
भक्तेच्छापूरकः[८१] सर्वाज्ञातलीलो[८२]–ऽतिमोहनः[८३] ।।
सर्वासक्तो[८४] भक्तमात्रासक्तः[८५] पतितपावनः[८६] ।।२७।।
स्वयशो–गान–संहृष्टहृदयाम्भोज–विष्टरः[८७] ।।
यशः–पीयूष–लहरी–प्लावितान्य–रसः[८८] परः[८९] ।।२८।।
लीलामृत–रसार्द्रार्द्रीकृताखिल–शरीर–भृत्[९०] ।।
गोवर्धनस्थित्युत्साहस्[९१] तल्लीला–प्रेमपूरितः[९२] ।।२९।।
यज्ञ–भोक्ता[९३] यज्ञ–कर्ता[९४] चतुर्वर्ग–विशारदः[९५] ।।
सत्यप्रतिज्ञस्[९६] त्रिगुणातीतो[९७] नयविशारदः[९८] ।।३०।।
स्व–कीर्तिवर्धनस्[९९] तत्त्वसूत्र–भाष्य–प्रदर्शकः[१००] ।।
मायावादाख्य–तूलाग्निर्[१०१] ब्रह्मवादनिरूपकः[१०२] ।।३१।।
अप्राकृताखिलाकल्पभूषितः[१०३] सहज–स्मितः[१०४] ।।
त्रिलोकीभूषणं[१०५] भूमिभाग्यं[१०६] सहजसुन्दरः[१०७] ।।३२।।
अशेष–भक्त–सम्प्रार्थ्यचरणाब्ज–रजोधनः[१०८] ।।

---

[६] कृष्णसेवा सदा कर्तव्य है. यज्ञादि कर्मोंकी तरह उसमें कालका नियम नहीं है.

(१०८नामके पाठ कियेको फल)

इत्यानन्दनिधेः प्रोक्तं नाम्नाम् अष्टोत्तरं शतम्।।३३।।
श्रद्धा–विशुद्ध–बुद्धिर् यः पठत्यनुदिनं जनः ।।
स तदेकमनाः सिद्धिम् उक्तां प्राप्नोत्यसंशयम्।।३४।।
तदप्राप्तौ वृथा मोक्षः तदाप्तौ तद्गतार्थता ।।
अतः सर्वोत्तमं स्तोत्रं जप्यं कृष्णरसार्थिभिः।।३५।।

।। इति श्रीमदग्निकुमारप्रोक्तं सर्वोत्तमस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।।

।।श्रीवल्लभाष्टकम्।।

(भूमिपे श्रीवल्लभस्वरूपमें प्रादुर्भूत होयवेको हेतु अरु प्रयोजन)

श्रीमद्वृन्दावनेन्दु–प्रकटित–रसिकानन्द–सन्दोहरूप–
स्फूर्जद्रासादिलीलामृतजलधिभराक्रान्तसर्वोऽपि शश्वत्।
तस्यैवात्मानुभाव–प्रकटन–हृदयस्याज्ञया प्रादुरासीद्
भूमौ यः सन्मनुष्याकृतिरतिकरुणस् तं प्रपद्ये हुताशम्।१।

(श्रीवल्लभको प्रादुर्भाव न होतो तो दैवी सृष्टिमें प्रकटे जीवन्को जनम व्यर्थ ह्वै जातो)

नाविर्भूयाद् भवांश्चेद् अधिधरणितलं भूतनाथोदितासन्–
मार्गध्वान्तान्धतुल्या निगमपथगतौ देवसर्गेऽपि जाताः।।
घोषाधीशं तदेमे कथमपि मनुजाः प्राप्नुयुर् नैव दैवी
सृष्टिर्व्यर्था च भूयान् निजफलरहिता देव! वैश्वानरैषा।।२।

(वाक्पतिके बिना श्रुतिन्को आशय अन्य कोउ जानि न सके)

न ह्यन्यो वागधीशात् श्रुतिगणवचसां भावमाज्ञातुम् ईष्टे
यस्मात् साध्वी स्वभावं प्रकटयति वधूर् अग्रतः पत्युरेव।।
तस्मात् श्रीवल्लभाख्य त्वदुदितवचनाद् अन्यथा रूपयन्ति
भ्रान्ता ये ते निसर्गत्रिदशरिपुतया केवलान्धन्तमोगाः।।३।

(निज आस्यके द्वारा प्रादुर्भावित या मारगमें जो कछु निवेदित कियो जाये ताको भगवान् साक्षात् उपभोग करत हैं)

प्रादुर्भूतेन भूमौ व्रजपतिचरणाम्भोज–सेवाख्य–वर्त्म–
प्राकट्यं यत् कृतं ते तदुत निजकृते श्रीहुताशेति मन्ये।।
यस्मादस्मिन् स्थितो यत्किमपि कथमपि क्वाप्युपाहर्तुमिच्छ–
त्यद्धा तद् गोपिकेशः स्ववदनकमले चारुहासे करोति।४।

(महाप्रभु भौतिक अग्निरूप नाहिं किन्तु श्रीकृष्णके मुखविरहरूप अग्नि हैं)

उष्णत्वैकस्वभावोऽप्यतिशिशिरवचः–पुंजपीयूषवृष्टिर्–
आर्तेष्वत्युग्र–मोहासुर–नृषु युगपत् तापमप्यत्र कुर्वन् ।।
स्वस्मिन् कृष्णास्यतां त्वं प्रकटयसि च नो भूतदेवत्वमेतद्
यस्माद् आनन्ददं श्रीव्रजजननिचये नाशकं चासुराग्नेः।५।

(आनन्दरूप श्रीवल्लभाग्निते आनन्दरूप ही श्रीकृष्णसेवारूप सागरको प्राकट्य भयो है)

आम्नायोक्तं यदम्भो भवनम् अनलतस् तच्च सत्यं विभो यत्
सर्गादौ भूतरूपाद् अभवद् अनलतः पुष्करं भूतरूपम् ।।
आनन्दैकस्वरूपात् त्वदधिभु यदभूत् कृष्णसेवारसाब्धिश्
चानन्दैक–स्वरूपस् तदखिलमुचितं हेतुसाम्यं हि कार्ये।६।

(श्रीवल्लभके मुखारविन्दके दर्शन कियेतें श्रीकृष्णदर्शनकी लालसा अरु आर्तिताप बढ़त है)

स्वामिन् श्रीवल्लभाग्ने क्षणमपि भवतः सन्निधानेकृपातः
प्राणप्रेष्ठ–व्रजाधीश्वर–वदन–दिदृक्षार्ति–तापो जनेषु ।।
यत् प्रादुर्भावम् आप्नोत्युचिततरम् इदं यत्तु पश्चाद् अपीत्थं
दृष्टेऽप्यस्मिन् मुखेन्दौ प्रचुरतरम् उदेत्येव तच्चित्रमेतत्।७।

(अज्ञानान्धकारके निवारक होयवेतें श्रीमहाप्रभून्की अग्निरूपता कही जात है. वस्तुतः तो आप श्रीकृष्णको ही आचार्यरूपेण प्राकट्य हैं)

अज्ञानाद्यन्धकारप्रशमनपटुता–ख्यापनाय त्रिलोक्याम्
अग्नित्वं वर्णितं ते कविभिरपि सदा वस्तुतः कृष्णएव ।।
प्रादुर्भूतो भवान् इत्यनुभव–निगमाद्युक्त–मानैर् अवेत्य
त्वां श्रीश्रीवल्लभेमे निखिलबुधजनाः गोकुलेशं भजन्ते।८।

।। इति श्रीमद्विट्ठलदीक्षितविरचितं श्रीवल्लभाष्टकं सम्पूर्णम् ।।

।। श्रीस्फुरत्कृष्णप्रेमामृतस्तोत्रम् ।।

(पुष्टिसम्प्रदायके प्रवर्तक गुरुरूप श्रीवल्लभको साप्तधा वर्णन : धर्मिस्वरूप[१] तथा ऐश्वर्यादि छ[२-७] गुणधर्मन्के रूपमें[५])

(पुष्टिसम्प्रदायप्रवर्तक गुरुरूप श्रीवल्लभाचार्यको स्वरूपलक्षण: ‘‘श्रीकृष्णलीलारूप सेवा–कथामें सदा परायण रहत हैं’’ सो ही धर्मिस्वरूप[१] कहावत है)

स्फुरत्–कृष्ण–प्रेमामृत–रस–भरेणातिभरिता

विहारान् कुर्वाणा व्रजपति–विहाराब्धिषु सदा।।
प्रियागोपीभर्तुः स्फुरतु सततं 'वल्लभ' इति
प्रथावत्यस्माकं हृदि सुभगमूर्तिः सकरुणा।।१।।

(पुष्टिसम्प्रदायमें गुरुरूप श्रीवल्लभको ऐश्वर्य[2] रूप गुण: श्रीभागवततत्त्वज्ञता है)

श्रीभागवतप्रतिपदमणिवर–भावांशुभूषिता मूर्तिः।।
'श्रीवल्लभा'भिधानस् तनोतु निजदासस्य सौभाग्यम्।२।

(पुष्टिसम्प्रदायमें गुरुरूप श्रीवल्लभको वीर्य[3] रूपी गुण: भगवत्सेवामें प्रतिबन्धक वादनको निराकरण करिके श्रीकृष्णसेवाके प्रेरक होनो है)

मायावादतमो निरस्य मधुभित्–सेवाख्य–वर्त्माद्भुतं
श्रीमद्–गोकुलनाथ–सङ्गमसुधा–सम्प्रापकं तत्क्षणात्।।
दुष्प्रापं प्रकटीचकार करुणा–रागाति–सम्मोहनः
स श्रीवल्लभभानुरुल्लसति यःश्रीवल्लवीशान्तरः।।३।।

(पुष्टिसम्प्रदायमें गुरुरूप श्रीवल्लभको यशो[4] रूपी गुण: पाण्डित्य, वेदादिशास्त्रपारंगतता, शास्त्रानुकूल आचरण, वैष्णवमार्गीयता अरु श्रीव्रजपतिमें अनन्य रतिमान् होनो है)

क्वचित् पाण्डित्यं चेत् न निगमगतिः सापि यदि न
क्रिया सा सापि स्यात् यदि न हरिमार्गे परिचयः ।।
यदि स्यात् सोऽपि श्रीव्रजपति–रतिर् नेति निखिलैः
गुणैर् अन्यः को वा विलसति विना वल्लभवरम्।।४।।

(पुष्टिसम्प्रदायमें गुरुरूप श्रीवल्लभको श्री[5] रूपी गुण: श्रीकृष्ण–

---

[10] कृष्ण सब कुछ अपनी इच्छासे करेंगे ऐसा विवेक रखकर प्रार्थना न करें.

सेवामें प्रतिबन्धक ऐसे वादन्को निराकरण करि प्रमाणचतुष्टयकी एकवाक्यता करि स्वसिद्धान्तको उपदेशक होनो, स्वयं श्रीकृष्ण-सेवापरायण होनो अरु भगवत्सेवोचित निरुपधिस्नेहको उद्बोधक होनो)

मायावादि-करीन्द्र-दर्प-दलनेनास्येन्दु-राजोद्गत
श्रीमद्-भागवताख्य-दुर्लभ-सुधा-वर्षेण वेदोक्तिभिः।।
राधावल्लभ-सेवया तदुचित-प्रेम्णोपदेशैरपि
'श्रीमद्वल्लभ'नामधेयसदृशो भावि न भूतोऽस्त्यपि।।५।।

(पुष्टिसम्प्रदायमें गुरुरूप श्रीवल्लभको ज्ञान[६] रूप गुणः कलिके बलवान् होयवेकी भीति मिटायके भगवत्प्रीतिकर सेवामार्गके प्रवर्तक होनो है)

यदङ्घ्रि-नख-मण्डल-प्रसृत-वारि-पीयूष-युग्-
वराङ्ग-हृदयैः कलिस् तृणमिवेह तुच्छीकृतः ।।
व्रजाधिपतिरिन्दिरा-प्रभृति-मृग्य-पादाम्बुजः
क्षणेन परितोषितस् तदनुगत्वमेवास्तु मे ।।६।।

(पुष्टिसम्प्रदायमें गुरुरूप श्रीवल्लभको वैराग्य[७] रूप गुणः पुष्टिमार्गीयिन्के सकल कलिकालदोषन्कूं मिटायवेके सिवाय अन्य सगरे विषयन्में विरक्त होनो है)

अघौघ-तमसावृतं कलि-भुजङ्गम् आसादितम्
जगद्-विषय-सागरे पतितम् अस्वधर्मे रतम् ।।
यदीक्षण-सुधानिधि-समुदितो-ऽनुकम्पामृताद्
अमृत्युम् अकरोत् क्षणाद् अरणमस्तु मे तत्पदम्।।७।।

।।इति श्रीविट्ठलेश्वरविरचितं श्रीस्फुरत्कृष्णप्रेमामृतस्तोत्रं सम्पूर्णम्।।

।। नामरत्नाख्यस्तोत्रम् ।।

(मङ्गल–उपक्रम)

यन्नामार्कोदयात् पापह्नध्वान्त–राशिः प्रशाम्यति ।।
विकसन्ति हृदब्जानि तन्नामानि सदाश्रये ।।१।।

(या स्तोत्रके ऋषि[१] छन्द[२] देव[३] विनियोग अरु फलसिद्धि[४] को निरूपण)

आनुष्टुभम् इहच्छन्दः[२] ऋषिर् अग्निकुमारजः[१] ।।
सर्वशक्ति–समायुक्तो देवः श्रीवल्लभात्मजः[३] ।।२।।
विनियोगः समस्तेष्ट–सिद्ध्यर्थे विनिरूपितः[४] ।।

(श्रीविट्ठलनाथ प्रभुचरणके १०८नाम)

श्रीविट्ठलः[१] कृपासिन्धुर्[२] भक्तवश्यो[३]–ऽतिसुन्दरः[४] ।।३।।
कृष्ण–लीला–रसाविष्टः[५] श्रीमान्[६] वल्लभ–नन्दनः[७] ।।
दुर्दृश्यो[८] भक्त–सन्दृश्यो[९] भक्तिगम्यो[१०] भयापहः[११] ।।४।।
अनन्य–भक्त–हृदयो[१२] दीनानाथैक–संश्रयः[१३] ।।
राजीव–लोचनो[१४] रास–लीला–रस–महोदधिः[१५] ।।५।।
धर्मसेतुर्[१६] भक्तिसेतुः[१७] सुखसेव्यो[१८] व्रजेश्वरः[१९] ।।
भक्तशोकापहः[२०] शान्तः[२१] सर्वज्ञः[२२] सर्वकामदः[२३] ।।६।।
रुक्मिणी–रमणः[२४] श्रीशो[२५] भक्तरत्न–परीक्षकः[२६] ।।
भक्त–रक्षैक–दक्षः[२७] श्रीकृष्ण–भक्ति–प्रवर्तकः[२८] ।।७।।
महासुर–तिरस्कर्ता[२९] सर्वशास्त्र–विदग्रणीः[३०] ।।

---

[१२] पुष्टिजीवका सर्वस्व केवल श्रीकृष्ण होते हैं, धन-घर-परिवार या समाज नहीं.

कर्मजाड्यभिदुष्णांशुर्[३१] भक्तनेत्र–सुधाकरः[३२] ।।८।।
महालक्ष्मी–गर्भरत्नं[३३] कृष्ण–वर्त्म–समुद्भवः[३४] ।।
भक्त–चिन्तामणिर्[३५] भक्ति–कल्पद्रुम–नवांकुरः[३६] ।।९।।
श्रीगोकुल–कृतावासः[३७] कालिन्दी–पुलिन–प्रियः[३८] ।।
गोवर्धनागमरतः[३९] प्रिय–वृन्दावनाचलः[४०] ।।१०।।
गोवर्धनाद्रि–मखकृन्[४१] महेन्द्र–मद–भित्–प्रियः[४२] ।।
कृष्णलीलैक–सर्वस्वः[४३] श्रीभागवत–भाववित्[४४] ।।११।।
पितृ–प्रवर्तित–पथ–प्रचार–सुविचारकः[४५] ।।
व्रजेश्वर–प्रीतिकर्ता[४६] तन्निमन्त्रण–भोजकः[४७] ।।१२।।
बाललीलादि–सुप्रीतो[४८] गोपी–सम्बन्धि–सत्कथः[४९] ।।
अति–गम्भीर–तात्पर्यः[५०] कथनीय–गुणाकरः[५१] ।।१३।।
पितृ–वंशोदधि–विधुः[५२] स्वानुरूप–सुतप्रसूः[५३] ।।
दिक्चक्रवर्तिसत्कीर्तिर्[५४] महोज्ज्वल–चरित्रवान्[५५] ।।१४।।
अनेक–क्षितिप–श्रेणीह्नमूर्धासक्त–पदाम्बुजः[५६] ।।
विप्रदारिद्र्य–दावाग्निर्[५७] भूदेवाग्नि–प्रपूजकः[५८] ।।१५।।
गो–ब्राह्मण–प्राणरक्षापरः[५९] सत्य–परायणः[६०] ।।
प्रिय–श्रुतिपथः[६१] शश्वन् महा–मखकरः[६२] प्रभुः[६३] ।।१६।।
कृष्णानुग्रह–संल्लभ्यो[६४] महा–पतित–पावनः[६५] ।।

अनेकमार्ग–संक्लिष्टहृजीवस्वास्थ्यप्रदो महान्[६६] ।।१७।।
नाना–भ्रम–निराकर्ता[६७] भक्ताज्ञानभिदुत्तमः[६८] ।।
महापुरुष–सत्–ख्यातिर्[६९] महापुरुष–विग्रहः[७०] ।।१८।।
दर्शनीयतमो[७१] वाग्मी[७२] मायावाद–निरास–कृत्[७३] ।।
सदाप्रसन्न–वदनो[७४] मुग्ध–स्मित–मुखाम्बुजः[७५] ।।१९।।
प्रेमार्द्रदृग्–विशालाक्षः[७६] क्षिति–मण्डल–मण्डनः[७७] ।।
त्रिजगद्व्यापिसत्कीर्तिहृधवलीकृत–मेचकः[७८] ।।२०।।
वाक्सुधाकृष्ट–भक्तान्तःकरणः[७९] शत्रुतापनः[८०] ।।
भक्त–सम्प्रार्थित–करो[८१] दासदासीप्सितप्रदः[८२] ।।२१।।
अचिन्त्य–महिमा–मेयो[८३] विस्मयास्पद–विग्रहः[८४] ।।
भक्तक्लेशासहः[८५] सर्वसहो[८६] भक्तकृते वशः[८७] ।।२२।।
आचार्य–रत्नं[८८] सर्वानुग्रह–कृन्–मन्त्र–वित्तमः[८९] ।।
सर्वस्व–दान–कुशलो[९०] गीत–संगीत–सागरः[९१] ।।२३।।
गोवर्धनाचलसखो[९२] गोप–गो–गोपिका–प्रियः[९३] ।।
चिन्तितज्ञो[९४] महाबुद्धिर्[९५] जगद्वन्द्यपदाम्बुजः[९६] ।।२४।।
जगदाश्चर्यरसकृत्[९७] सदा कृष्ण–कथा–प्रियः[९८] ।।
सुखोदर्ककृतिः[९९] सर्व–सन्देह–च्छेद–दक्षिणः[१००] ।।२५।।
स्वपक्ष–रक्षणे दक्षः[१०१] प्रतिपक्ष–क्षयंकरः[१०२] ।।

गोपिकाविरहाविष्टः[१०३] कृष्णात्मा[१०४] स्वसमर्पकः[१०५]।।२६।
निवेदि–भक्त–सर्वस्वः[१०६] शरणाध्व–प्रदर्शकः[१०७] ।।
श्रीकृष्णानुगृहीतैकह्नप्रार्थनीय–पदाम्बुजः[१०८]।।२७।।

(या स्तोत्रके पाठको फल)

इमानि नामरत्नानि श्रीविट्ठल–पदाम्बुजम् ।।
ध्यात्वा तदेक–शरणो यः पठेत् स हरिं लभेत् ।।२८।।
यद्–यन्–मनस्यभिध्यायेत् तत्तद् आप्नोत्यसंशयम् ।।
नामरत्नाभिधम् इदं स्तोत्रं यः प्रपठेत् सुधीः।।२९।।
तदीयत्वं गृहाणाशु प्रार्थ्यम् एतन् मम प्रभो ।।
श्रीविट्ठल–पदाम्भोजह्नमकरन्द–जुषो–ऽनिशम् ।।
इयं श्रीरघुनाथस्य कृतिर् विजयतेतराम् ।।३०।।

।। इति श्रीरघुनाथविरचितं नामरत्नाख्यस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।।

।। षोडशग्रन्थमाहात्म्यम् ।।

(षोडग्रन्थकी रचनाको प्रयोजन)

श्रीमदाचार्यचरणाः स्वीयानां भक्तिसिद्धये ।।
अकार्षुः षोडशग्रन्थान् स्वसिद्धान्तार्थबोधकान्।।१।।
तद्व्याख्यानं कृतं पूर्वैः प्रभुभिश्च पृथक् क्वचित् ।।
यमुनाष्टकम् आरभ्य सेवाफलम् उदाहृताः।।२।।

(षोडशग्रन्थको प्रतिपाद्य)

एवं षोडशभिर् ग्रन्थैः पुरुषोत्तम–सेवनम् ।।

प्रतिपाद्य फलत्वेन चक्रे जीवोद्धृतिं विभुः।।३।।

(षोडशग्रन्थ श्रीआचार्यजीको नामात्मक स्वरूप)

अवतार-दशायान्तु उद्धृती रूप-दर्शनात् ।।
इह नामात्मकैर् ग्रन्थैः स्वदासानां सदोद्धृतिः।।४।।

(षोडशग्रन्थके पाठकी आवश्यकता)

तस्मात् सर्वप्रयत्नेन दैवैः कर्तव्यमेव हि ।।
सेवनं श्रीव्रजेशस्य तद्ग्रन्थानां च पाठनम्।।५।।

।। इति श्रीद्वारकेशचरणविरचितं षोडशग्रन्थमाहात्म्यम् ।।

।। श्रीयमुनाष्टकम् ।।

(पुष्टिप्रभुद्वारा श्रीयमुनाजीमें स्थापित अष्टविध ऐश्वर्यन्मेंते प्रथम ऐश्वर्यः श्रीयमुनाजी या मार्गमें सकलसिद्धिन्की हेतु हैं)

नमामि यमुनाम् अहं सकल-सिद्धि-हेतुं मुदा
मुरारि-पद-पंकज-स्फुरदमन्द-रेणूत्कटाम् ।।
तटस्थ-नवकानन-प्रकट-मोद-पुष्पाम्बुना
सुरासुर-सुपूजित-स्मरपितुः श्रियं बिभ्रतीम् ।।१।।

(द्वितीय ऐश्वर्यः श्रीयमुनाजी भगवद्रतिकू बढ़ायवेवारी हैं)

कलिन्द-गिरि-मस्तके पतदमन्द-पूरोज्ज्वला
विलास-गमनोल्लसत्-प्रकट-गण्ड-शैलोन्नता ।।
सघोष-गति-दन्तुरा समधिरूढ-दोलोत्तमा
मुकुन्द-रति-वर्धिनी जयति पद्मबन्धोः सुता ।।२।।

ठाकुरजीके स्नान-पानके अतिरिक्त यमुनाजलका दूसरा कोई उपयोग न करें.

(तृतीय ऐश्वर्य: भुवनपावनी श्रीयमुनाजी पुष्टिजीव अरु पुष्टिप्रभु के बीच अन्तरायभूत प्रतिबन्धन्कू दूर करि प्रभुको अनुभव होय सके ऐसी शुद्धि करिवेवारी हैं)

भुवं भुवन–पावनीम् अधिगताम् अनेक–स्वनैः
प्रियाभिरिव सेवितां शुक–मयूर–हंसादिभिः ।।
तरङ्ग–भुज–कंकण–प्रकट–मुक्तिका–वालुका–
नितम्ब–तट–सुन्दरीं नमत कृष्ण–तुर्य–प्रियाम् ।।३।।

(चतुर्थ ऐश्वर्य: भगवान्के समानगुणधर्मवारी होयवेसूं श्रीयमुनाजीसों जुड्यो जीव भगवान्सूं हु जुड जावे है)

अनन्त–गुणभूषिते शिव–विरञ्चि–देव–स्तुते
घनाघन–निभे सदा ध्रुव–पराशराभीष्टदे ।।
विशुद्ध–मथुरा–तटे सकल–गोप–गोपी–वृते
कृपा–जलधि–संश्रिते मम मनः सुखं भावय ।।४।।

(पांचमो ऐश्वर्य: भगवान्कों प्रिय भक्तन्के कलिदोषन्कूं श्रीयमुनाजी दूर करिवेवारी हैं)

यया चरण–पद्मजा मुररिपोः प्रियम्भावुका
समागमनतो–ऽभवत् सकल–सिद्धिदा सेवताम् ।।
तया सदृशताम् इयात् कमलजा–सपत्नीव यद्–
हरिप्रिय–कलिन्दया मनसि मे सदा स्थीयताम् ।।५।।

(छठो ऐश्वर्य: पुष्टिजीवन्कों श्रीयमुनाजी पुष्टिप्रभुके प्रिय बनायवेवारी हैं)

नमो–ऽस्तु यमुने सदा तव चरित्रम् अत्यद्भुतं
न जातु यम–यातना भवति ते पयः–पानतः ।।

यमोऽपि भगिनी-सुतान् कथमु हन्ति दुष्टानपि
प्रियो भवति सेवनात् तव हरेर् यथा गोपिकाः ।।६।।

(सातमो ऐश्वर्यः श्रीयमुनाजी भगवत्सेवा करिवेवारेके भीतर अलौकिकसामर्थ्यरूप तनुनवत्वको सम्पादन करिवेवारी हैं)

ममास्तु तव सन्निधौ तनु-नवत्वम् एतावता
न दुर्लभतमा रतिर् मुररिपौ मुकुन्द-प्रिये ।।
अतो-ऽस्तु तव लालना सुर-धुनी परं सङ्गमात्
तवैव भुवि कीर्तिता न तु कदापि पुष्टिस्थितैः ।।७।।

(आठमो ऐश्वर्यः पुष्टिप्रभुके लीलासामयिक श्रमजलकणके संग पुष्टिजीवनको सम्बन्ध सम्पादित करिवेवारी हैं)

स्तुतिं तव करोति कः कमलजा-सपत्नि प्रिये
हरेर् यद् अनुसेवया भवति सौख्यम् आमोक्षतः ।।
इयं तव कथाधिका सकल-गोपिका-सङ्गम-
स्मरश्रम-जलाणुभिः सकल-गात्रजैः सङ्गमः ।।८।।

(श्रीयमुनाष्टकके पाठतेंः सर्वपापक्षय, सकलसिद्धिकी प्राप्ति, मुकुन्दरति, मुकुन्दको सन्तोष अरु जीवकों अपने स्वभावपे विजय इतने फल सिद्ध होत हैं)

तवाष्टकम् इदं मुदा पठति सूरसूते सदा
समस्त-दुरित-क्षयो भवति वै मुकुन्दे रतिः ।।
तया सकल-सिद्धयो मुररिपुश्च सन्तुष्यति
स्वभाव-विजयो भवेद् वदति वल्लभः श्रीहरेः ।।९।।

।। इति श्रीवल्लभाचार्यविरचितं श्रीयमुनाष्टकस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।।

।। बालबोधः ।।

(धर्म–अर्थ–काम–मोक्षरूपी चार पुरुषार्थनूके सकल सिद्धान्तनूको संग्रह)

नत्वा हरिं सदानन्दं सर्व–सिद्धान्त–संग्रहम् ।।
बाल–प्रबोधनार्थाय वदामि सुविनिश्चितम्।।१।।

(पुरुषार्थनूके अलौकिक अरु लौकिक करिके दो भेद होत हैं. तिनमेंते अलौकिक तो वेदसिद्ध हैं अरु लौकिक धर्म–अर्थ–कामके विचार करिवेको या ग्रन्थमें कोउ प्रयोजन न होयवेते लौकिक मोक्ष विचारणीय है)

'धर्मार्थ–काममोक्षा'ख्याश् चत्वारोऽर्था मनीषिणाम् ।।
जीवेश्वर–विचारेण द्विधा ते हि विचारिताः।।२।।
अलौकिकास्तु वेदोक्ताः साध्य–साधन–संयुताः ।।
लौकिका ऋषिभिः प्रोक्तास् तथैवेश्वर–शिक्षया।।३।।
लौकिकंस्तु प्रवक्ष्यामि वेदाद् आद्या यतः स्थिताः ।।
धर्मशास्त्राणि नीतिश्च कामशास्त्राणि च क्रमात्।।४।।
त्रिवर्ग–साधकानीति न तन्निर्णय उच्यते ।।

(स्वतोमोक्ष अरु परतोमोक्ष के भेदतें भिन्न–भिन्न मोक्षके प्रकारनूमें स्वतोमोक्षके दो अवान्तरभेदः बाह्यत्यागहेतुक अरु आभ्यन्तरत्यागहेतुक होत हैं)

मोक्षे चत्वारि शास्त्राणि लौकिके परतः स्वतः।।५।।
द्विधा द्वे–द्वे स्वतस् तत्र सांख्य–योगौ प्रकीर्तितौ ।।
त्यागात्याग–विभागेन सांख्ये त्यागः प्रकीर्तितः ।।६।।
अहन्ता–ममता–नाशे सर्वथा निरहंकृतौ ।।

स्वरूपस्थो यदा जीवः कृतार्थः स निगद्यते।।७।।
तदर्थं प्रक्रिया काचित् पुराणेऽपि निरूपिता ।।
ऋषिभिर् बहुधा प्रोक्ता फलम् एकम् अबाह्यतः।।८।।
अत्यागे योगमार्गो हि त्यागोऽपि मनसैव हि ।।
यमादयस्तु कर्तव्याः सिद्धे योगे कृतार्थता।।९।।

(परब्रह्मके तीन देवरूपन्में ब्रह्मा[क] मोक्षदायक ज्ञानदाता देवता होयवेसूं, परतोमोक्षके दोय प्रकारन्में शैव-वैष्णव शास्त्रन्के अनुसार निर्दोषपूर्णगुण सर्वात्मक ब्रह्मताया निरूपित सृष्टिके संहारक तथा पालक केवल शिव[ख]-विष्णु[ग] ही तदीयता[१] किंवा तदाश्रय[२] के द्वारा मोक्षदान करत हैं)

पराश्रयेण मोक्षस्तु द्विधा सोऽपि निरूप्यते ।।
ब्रह्मा ब्राह्मणतां यातस् तद्रूपेण सुसेव्यते।।१०।।
ते सर्वार्था न चाद्येन[क] शास्त्रं किञ्चिद् उदीरितम् ।।
अतः शिवश्च विष्णुश्च जगतो हितकारकौ।।११।।
वस्तुनः स्थिति-संहारौ कार्यौ शास्त्र-प्रवर्तकौ ।।
ब्रह्मैव तादृशं यस्मात् सर्वात्मकतयोदितौ।।१२।।
निर्दोष-पूर्ण-गुणता तत्-तच्छास्त्रे तयोः[ख-ग] कृता ।।
भोग-मोक्ष-फले दातुं शक्तौ द्वावपि यद्यपि।।१३।।
भोगः शिवेन मोक्षस्तु विष्णुनेति विनिश्चयः ।।
लोकेऽपि यत् प्रभुर्भुंक्ते तन् न यच्छति कर्हिचित् ।।१४।।
अतिप्रियाय तदपि दीयते क्वचिदेव हि ।।
नियतार्थ-प्रदानेन तदीयत्वं[ख१/ग१] तदाश्रयः[ख२/ग२] ।।१५।।

प्रत्येकं साधनं चैतद् द्वितीयार्थे महान् श्रमः।।

(स्वाभाविक दोषन्की निवृत्तिके काज तदाश्रय[ख१/ग१] तदीयता[ख२/ग२] की बुद्धि राखिके स्वधर्माचरण हू निभानो आवश्यक)

जीवाः स्वभावतो दुष्टा दोषाभावाय सर्वदा।।१६।।
श्रवणादि ततः प्रेम्णा सर्वं कार्यं हि सिध्यति ।।
मोक्षस्तु सुलभो विष्णोर् भोगश्च शिवतस्तथा।।१७।।
समर्पणेनात्मनो हि तदीयत्वं[ख२/ग२] भवेद् ध्रुवम् ।।
अतदीयतया चापि केवलश्चेत् समाश्रितः।।१८।।
तदाश्रय[ख१/ग१]–तदीयत्व[ख२/ग२]–बुद्ध्यै किंचित् समाचरेत् ।।
स्वधर्मम् अनुतिष्ठन् वै भारद्वैगुण्यम् अन्यथा ।।
इत्येवं कथितं सर्वं नैतज्ज्ञाने भ्रमः पुनः ।।१९।।

।।इति श्रीवल्लभाचार्यविरचितो बालबोधः सम्पूर्णः।।

।।सिद्धान्तमुक्तावली।।

(स्वमार्गीय सिद्धान्तके विनिश्चयको उपदेश)

नत्वा हरिं प्रवक्ष्यामि स्वसिद्धान्त–विनिश्चयम् ।।

(श्रीकृष्णसेवाकी नित्यकर्तव्यता[१]को उपदेश, सेवाकी फलावस्थाको लक्षण[२], सेवाको स्वरूपलक्षण[३], सेवाकी साधनावस्थाको लक्षण[४] तथा अवान्तरफललक्षण[५])

कृष्णसेवा सदा कार्या[१] मानसी[२] सा परा मता।।१।।
चेतस् तत्प्रवणं[३] सेवा तत्सिद्ध्यै तनुवित्तजा[४] ।।

ततः संसार-दुःखस्य निवृत्तिर् ब्रह्म-बोधनम्[५]।।२।।

(पुष्टिमार्गीय सेवामें सेव्य ब्रह्मना पर तथा अक्षर[क-ख] रूपी दोय भेद तथा अक्षरब्रह्मके हू जगद्रूप[ख-१] तथा जगद्विलक्षण[ख-२] दोय उपभेद)

परं ब्रह्म तु कृष्णो[क] हि सच्चिदानन्दकं बृहत्[ख] ।।
द्विरूपं तद्धि[ख] सर्वं स्याद्[ख/१] एकं तस्माद् विलक्षणम्[ख/२]।।३।

(सच्चिदानन्दक बृहद्[ख/१-२] के विषयमें बहोत भांतिके मतभेद, तामें श्रौतमतको निष्कर्ष)

अपरं[ख/१] तत्र पूर्वस्मिन्[ख/२] वादिनो बहुधा जगुः ।।
मायिकं सगुणं कार्यं स्वतन्त्रं चेति नैकधा।।४।।
[ख/२]तद् एवैतत्[ख/१] प्रकारेण भवतीति श्रुतेर्मतम् ।।

(अक्षरब्रह्म[ख/२] को प्रत्यक्षज्ञान श्रुत्यादिविहित श्रवणादि साधनन्तें होत है किन्तु परोक्ष शास्त्रीयशब्दन्के ज्ञानसों हू इतनो तो ज्ञात होत ही है के भक्त्यैकगम्य श्रीकृष्णकी[क] सेवामें उपयोगी सब सामग्री ब्रह्मात्मक[ख/१] ही है. याकी जल[१]-तीर्थ[२]-देवी[३] ऐसे त्रिरूप गङ्गाजीके दृष्टान्तसों उपपत्ति)

द्विरूपं[ख/१-२] चापि गङ्गावज् ज्ञेयं सा[१] जलरूपिणी।।५।।
माहात्म्य-संयुता[२] नृणां सेवतां भुक्ति-मुक्ति-दा ।।
मर्यादामार्ग-विधिना तथा [ख/१-२]ब्रह्मापि बुध्यताम्।।६।।
तत्रैव[३] देवता-मूर्तिः भक्त्या या दृश्यते क्वचित् ।।
गङ्गायां च विशेषेण प्रवाहाभेद-बुद्धये।।७।।
प्रत्यक्षा सा[३] न सर्वेषां प्राकाम्यं स्यात् तया[३] जले[१] ।।

विहितात् च फलात् तद्धि प्रतीत्यापि विशिष्यते।।८।।
यथा जलं तथा सर्वं[ख/१] यथा शक्ता तथा बृहत्[ख/२] ।।
यथा देवी तथा कृष्णः[क] ....।।

(लौकिक जगत् सत्त्व-रजो-तमो गुणात्मक त्रिविध होयवेसों लौकिक व्यवहारके नियामक देवता हू तीन गुणन्के अधिष्ठाता ब्रह्मा-विष्णु-शिव होत हैं. स्वमार्गीय सेवा, जगत्[ख/१] कों अक्षरब्रह्मात्मक[ख/२] जानिके, माहात्म्यज्ञानपूर्वक श्रीकृष्ण[क] में अनन्यासक्तिरूपा होयवेसों ताके नियामक तो इकले श्रीकृष्णकों ही जानने)

.........................तत्राप्येतद् इहोच्यते।।९।।
जगत्तु त्रिविधं प्रोक्तं ब्रह्म-विष्णु-शिवास् ततः ।।
देवता-रूपवत्-प्रोक्ता ब्रह्मणीत्थं हरिर् मतः।।१०।।
कामचारस्तु लोके-ऽस्मिन् ब्रह्मादिभ्यो न चान्यथा ।।
परमानन्दरूपे तु कृष्णे स्वात्मनि निश्चयः।।११।।
अतस्तु [क+ख१+ख२]ब्रह्मवादेन कृष्णे बुद्धिर् विधीयताम् ।।

(सेवाकर्ता जीवात्माकों स्वस्वरूपको ज्ञान[क/१], परब्रह्मके माहात्म्यको ज्ञान[क/२], श्रीकृष्णमें अनन्यरति[क/३] तथा तदनुकूल क्रिया[क/४] ये चार बात मिलें तो उत्तमाधिकारी[क]. इनमेंतें कोउ एकके अभावमें मध्यमाधिकारी[ख]. केवल क्रियापरायण कनिष्ठाधिकारी[ग] होत है. लोकार्थी ह्वैके भगवत्सेवा करिवेवारेकों हीनाधिकारी[घ] जानने. ऐसे चार प्रकारके अधिकारी होत है)

आत्मनि ब्रह्मरूपेतु छिद्रा व्योम्नीव चेतनाः।।१२।।
उपाधि-नाशे विज्ञाने[क/१] ब्रह्मात्मत्वावबोधने[क/२] ।।

अपने ठाकरुजीकेलिए भेट-सामग्री लेनेवाला अधम है, उसका नर्कपात निश्चित है.

गङ्गा–तीर–स्थितो यद्वत् देवतां तत्र पश्यति।।१३।।
तथा कृष्णं परं ब्रह्म स्वस्मिन् ज्ञानी[क/३] प्रपश्यति[क/४] ।।
संसारी[ख=२/४] यस्तु भजते स दूरस्थो यथा तथा।।१४।।
अपेक्षित–जलादीनाम् अभावात् तत्र दुःख–भाक् ।।
तस्मात् श्रीकृष्णमार्गस्थो विमुक्तः सर्वलोकतः।।१५।।
आत्मानन्द–समुद्रस्थं कृष्णमेव विचिन्तयेत् ।।
लोकार्थी[घ] चेद् भजेत् कृष्णं क्लिष्टो भवति सर्वथा।।१६।।
क्लिष्टोऽपि[ग] चेद् भजेत् कृष्णं लोको नश्यति सर्वथा ।।

(उत्तमाधिकारी न होय तो भगवत्सेवा कैसे तथा कहां करनी ताको उपदेश)

ज्ञानाभावे पुष्टिमार्गी तिष्ठेत् पूजोत्सवादिषु।।१७।।
मर्यादास्थस्तु गङ्गायां श्रीभागवत–तत्परः ।।
अनुग्रहः पुष्टिमार्गे नियामक इति स्थितिः।।१८।।
उभयोस्तु क्रमेणैव पूर्वोक्तैव फलिष्यति ।।
ज्ञानाधिको भक्तिमार्गः एवं तस्मात् निरूपितः।।१९।।

(भक्ति न होयवेपे अन्यथाभावसों ग्रस्त होयवेवारेकी तो सेवा व्यर्थ ह्वै जात है)

भक्त्यभावेतु तीरस्थो यथा दुष्टैः स्वकर्मभिः ।।
अन्यथाभावमापन्नस् तस्मात् स्थानाच्च नश्यति।।२०।।

(भगवत्सेवासम्बन्धी उपदेशको उपसंहार)

एवं स्व–शास्त्र–सर्वस्वं मया गुप्तं निरूपितम् ।।
एतद् बुद्ध्वा विमुच्येत पुरुषः सर्व–संशयात्।।२१।।

।।इति श्रीवल्लभाचार्यविरचिता सिद्धान्तमुक्तावली सम्पूर्णा।।

---

[२४] असमर्पितके उपभोगसे दासत्व खंडित होता है. असमर्पित अतः त्याज्य है.

।। पुष्टिप्रवाहमर्यादाभेदः ।।

(पुष्टि[क] प्रवाह[ख] मर्यादा[ग] के मार्ग[१] सर्ग[२] फलन्[३] को पार्थक्य)

पुष्टि[क/१]–प्रवाह[ख/१]–मर्यादा[ग/१] विशेषेण पृथक् पृथक् ।।
जीव[२/य]–देह[२/र]–क्रिया[२/ल] भेदैः प्रवाहेण[२] फलेन[३] च।।१।।
वक्ष्यामि सर्व–सन्देहा न भविष्यन्ति यच्छ्रुतेः ।।

(तीनों मार्गन्के भेदके साधक प्रमाण)

भक्तिमार्गस्य कथनात्[क/१] पुष्टिरस्तीति निश्चयः।।२।।
‘द्वौ भूतसर्गावि’त्युक्तेः[ख/१] प्रवाहोऽपि व्यवस्थितः ।।
वेदस्य विद्यमानत्वात्[ग/१] मर्यादापि व्यवस्थिता।।३।।

(पुष्टिमार्ग[क/१] के पृथक् होयवेके विशेष प्रमाण)

कश्चिदेव हि भक्तो हि ‘यो मद्भक्त’ इतीरणात् ।।
सर्वत्रोत्कर्षकथनात् पुष्टिर् अस्तीति निश्चयः।।४।।
न सर्वोऽतः प्रवाहाद् हि भिन्नो वेदाच्च भेदतः ।।
‘यदा यस्ये’ति वचनात् ‘नाहं वेदैर्’इतीरणात्।।५।।
मार्गैकत्वेऽपि चेद् अन्त्यौ तनू भक्त्यागमौ मतौ ।।
न तद् युक्तं सूत्रतो हि भिन्नो युक्त्या हि वैदिकः।।६।।
जीव–देह–कृतीनां च भिन्नत्वं नित्यता–श्रुतेः ।।
यथा तद्वत् पुष्टिमार्गे द्वयोरपि निषेधतः।।७।।
प्रमाण–भेदाद् भिन्नोहि पुष्टिमार्गो[क/१] निरूपितः ।।

(पुष्टि–प्रवाह–मर्यादाके सर्गन्के[२] भिन्न–भिन्न होयवेके हेतु)

सर्गभेदं[२] प्रवक्ष्यामि स्वरूपा[य]ऽङ्ग[र] क्रिया[ल] युतम् ।।८।।
इच्छा-मात्रेण[ख/२] मनसा प्रवाहं सृष्टवान् हरिः ।।
वचसा[ग/२] वेदमार्गं हि पुष्टिं कायेन[क/२] निश्चयः।।९।।

(तीनों मार्गन्के फलन्के हु भिन्न-भिन्न होयवेके हेतु)

मूलेच्छातः[ख/३] फलं लोके वेदोक्तं[ग/३] वैदिकेपि च ।।
कायेन[क/३] तु फलं पुष्टौ भिन्नेच्छातोऽपि नैकधा ।।१०।।

(जीवन्के त्रिविध सर्ग[कखग-२])

'तान् अहं द्विषतो' वाक्याद् भिन्ना जीवाः प्रवाहिणः[ख] ।।
अत एवेतरौ[कग] भिन्नौ सान्तौ मोक्ष-प्रवेशतः।।११।।

(तहां पुष्टिसर्गीय जीव[२/य] देह[२/र] क्रिया[२/ल] के विशेष उपभेद)

तस्माज् जीवाः पुष्टिमार्गे भिन्नाएव न संशयः ।।
भगवद्-रूप-सेवार्थं तत्सृष्टिः नान्यथा भवेत्[क/२/य] ।।१२।।
स्वरूपेणावतारेण लिङ्गेन च गुणेन च ।।
तारतम्यं न स्वरूपे देहे वा तत्क्रियासु वा ।।१३।।
तथापि यावता कार्यं तावत् तस्य करोति हि[क/२/र] ।।
तेहि द्विधा शुद्धमिश्र-भेदान् मिश्रास् त्रिधा पुनः।।१४।।
प्रवाहादि-विभेदेन भगवत्कार्य-सिद्धये ।।
पुष्ट्या विमिश्राः सर्वज्ञाः प्रवाहेण क्रियारताः।।१५।।
मर्यादया गुणज्ञास्ते शुद्धाः प्रेम्णाति-दुर्लभाः[क/२/ल] ।।
एवं सर्गस्तु तेषां हि... ... ... ।।

---

२६ दान अधिक-कम हो सकता है, परन्तु समर्पण तो पूर्ण ही होता है.

(पुष्टिमार्गमें[क/३] फलको सविशेष निरूपण)

… … … … … … फलं त्वत्र निरूप्यते।।१६।।
भगवानेव हि फलं स यथाविर्भवेद् भुवि ।।
गुण–स्वरूप–भेदेन तथा तेषां फलं भवेत्।।१७।।
आसक्तौ भगवान् एव शापं दापयति क्वचित् ।।
अहंकारे–ऽथवा लोके तन्मार्ग–स्थापनाय हि।।१८।।
न ते पाषण्डतां यान्ति नच रोगाद्युपद्रवः ।।
महानुभावाः प्रायेण शास्त्रं शुद्धत्व–हेतवे।।१९।।
भगवत्–तारतम्येन तारतम्यं भजन्ति हि ।।
लौकिकत्वं वैदिकत्वं कापट्यात् तेषु नान्यथा।।२०।।
वैष्णवत्वं हि सहजं ततो–ऽन्यत्र विपर्ययः ।।

(कर्मन्की गति गहन होयवेते सदा परिभ्रमणशील प्रवाही सदृश कोउ चर्षणी जीव अधिकार बिना जब पुष्टि प्रवाह किंवा मर्यादा मार्गमेंते कोउ एक मार्गमें कबहूंक आय जात है ताको स्वरूप तथा फल)

सम्बन्धिनस्तु ये जीवाः प्रवाहस्थास् तथा परे।।२१।।
'चर्षणी'शब्दवाच्यास् ते सर्वे सर्ववर्त्मसु ।।
क्षणात् सर्वत्वम् आयान्ति रुचिस्ततेषां न कुत्रचित्।।२२।।
तेषां क्रियानुसारेण सर्वत्र सकलं फलम् ।।

(चर्षणीसदृश प्रवाहमार्गीय जीवन्के[ख/२/य] दोय उपभेद)

प्रवाहस्थान्[ख] प्रवक्ष्यामि
स्वरूपा[ख/२/य]ऽङ्ग[ख/२/र] क्रिया[ख/२/ल] युतान्।।२३।।

जीवास्ते ह्यासुराः[ख/२/य] सर्वे 'प्रवृत्तिञ्चे'ति वर्णिताः ।।
ते च द्विधा प्रकीर्त्यन्ते ह्यज्ञ–दुर्ज्ञ–विभेदतः।।२४।।
दुर्ज्ञास् ते भगवत्प्रोक्ता ह्यज्ञास् तान् अनु ये पुनः ।।
प्रवाहेऽपि समागत्य पुष्टिस्थस् तैर् न युज्यते।।२५।।
सोऽपि तैस् तत्कुले जातः कर्मणा जायते यतः ।।
… … … … … … … … … ।।

(यासुं आगे ग्रन्थके 'ख'भागमें '२/र+२/ल' तथा '३'अंश; तेसेई 'ग'भागमें '२/य+२/र+२/ल'+'३' अंश त्रुटितजानने)

।।इति श्रीवल्लभाचार्यविरचितः पुष्टिप्रवाहमर्यादाभेदः सम्पूर्णः।।

।। सिद्धान्तरहस्यम् ।।

(''दोषरहित भगवान्‌की सेवा सदोष जीव केसे करि सके'' ऐसी चिन्ताके निवारणार्थ स्वयं भगवान्‌ने प्रकट होयके ''आत्मसमर्पणपूर्वक सेवा करिवेते कोउ दोष भगवत्सेवामें बाधक होय सकत नाहिं'' ऐसी जो आज्ञा दीनि ताको वर्णन)

श्रावणस्यामले पक्षे एकादश्यां महानिशि ।।
साक्षाद् भगवता प्रोक्तं तदक्षरश उच्यते ।।१।।

(स्व तथा स्वकीय सकल वस्तुन्‌कों परमात्माकों समर्पण कियेते ब्रह्मसम्बन्ध सिद्ध होत है, तासों पांचोंमें[१-५]ते काहू तरहको दोष भगवत्सेवामें बाधक होत नाहिं)

ब्रह्म–सम्बन्ध–करणात् सर्वेषां देह–जीवयोः ।।
सर्व–दोष–निवृत्तिर् हि दोषाः पञ्चविधाः स्मृताः।।२।।

घरमें जबतक प्रभु पधारते नहीं हैं तबतक ब्रह्मसंबंध हुवा ही नहीं है ऐसा समझो.

सहजा[१] देश–कालोत्थाः[२-३] लोक–वेदनिरूपिताः ।।
संयोगजाः[४] स्पर्शजा[५]श्च न मन्तव्याः कथञ्चन।।३।।
अन्यथा सर्वदोषाणां न निवृत्तिः कथञ्चन ।।

(आत्मनिवेदीके तीन कर्तव्यः असमर्पित वस्तुन्को त्याग[१] समर्पित वस्तुन्को ही उपभोग[२] तथा अर्धभुक्त वस्तुन्को असमर्पण[३])

असमर्पित–वस्तूनां तस्माद् वर्जनम् आचरेत्[१]।।४।।
निवेदिभिः समर्प्यैव सर्वं कुर्याद् इति स्थितिः[२] ।।
न मतं देवदेवस्य सामिभुक्त–समर्पणम्।।५।।
तस्माद् आदौ सर्वकार्ये सर्व–वस्तु–समर्पणम्[३] ।।

(लोकमें हू दास अपनो तथा अपनी वस्तुन्को अपने स्वामीकों समर्पण ही करत है, दान नहीं, तैसे ही आत्मनिवेदी जीव हू भगवान्कों समर्पण करत हे, दान नहीं, तातें दत्तापहारको दोष लागत नाहीं)

दत्तापहार–वचनं तथा च सकलं हरेः।।६।।
न ग्राह्यम् इति वाक्यं हि भिन्न–मार्ग–परं मतम् ।।
सेवकानां यथा लोके व्यवहारः प्रसिध्यति।।७।।
तथा कार्यं समर्प्यैव सर्वेषां ब्रह्मता ततः ।।

(आत्मा तथा आत्मीय निखिल वस्तुन्कों भगवान्कों समर्पण कियेतें सेवामें तिनके विनियोग करिवे लायक शुद्धि होत ही है)

गङ्गात्वं सर्वदोषाणां गुण–दोषादि–वर्णना।।८।।
गङ्गात्वे न निरूप्या स्यात् तद्वद् अत्रापि चैव हि ।।

।।इति श्रीवल्लभाचार्यविरचितं सिद्धान्तरहस्यं सम्पूर्णम्।।

।। नवरत्नम् ।।

(लौकिक किंवा अलौकिक, सेवोपयोगी किंवा अनुपयोगी वस्तुन्के विषयमें जो चिन्ता होत है तिनको आत्मनिवेदनके स्वरूपको चिन्तन करिके दूर करि लेनी)

चिन्ता कापि न कार्या निवेदितात्मभिः कदापीति ।।
भगवानपि पुष्टिस्थो न करिष्यति लौकिकीञ्च गतिम्।।१।
निवेदनन्तु स्मर्तव्यं सर्वथा तादृशैर् जनैः ।।
सर्वेश्वरश्च सर्वात्मा निजेच्छातः करिष्यति ।।२।।

(निवेदित किंवा अनिवेदित विषयमें स्वयंके अथवा निवेदित स्वकीयन्के विनियोगतें भक्तिके काज होती चिन्ता आत्मनिवेदनके स्वरूपको विचार करिके दूर करि लेनी)

सर्वेषां प्रभुसम्बन्धो न प्रत्येकम् इति स्थितिः ।।
अतोऽन्यविनियोगेऽपि चिन्ता का स्वस्य सोऽपि चेत्।।३।।
अज्ञानाद् अथवा ज्ञानात् कृतम् आत्मनिवेदनम् ।।
यैः कृष्णसात्कृतप्राणैः तेषां का परिदेवना।।४।।

(आत्मनिवेदनमें अविश्वासके कारण किंवा निवेदितन्को भगवत्सेवामें विनियोग शक्य न होयवेपे होती चिन्ता श्रीपुरुषोत्तमके स्वरूपको विचार करिके दूर करि लेनी)

तथा निवेदने चिन्ता त्याज्या श्रीपुरुषोत्तमे ।।
विनियोगेऽपि सा त्याज्या समर्थोहि हरिः स्वतः।।५।।

(आत्मनिवेदीके किंवा ताके निवेदित परिजनन्के लौकिक अथवा वैदिक व्यवहार स्वस्थतातें यदि निभते न होंय ताकी चिन्ता स्वयंके साक्षिभावको विचार करिके दूर करि लेनी)

लोके स्वास्थ्यं तथा वेदे हरिस्तु न करिष्यति ।।
पुष्टिमार्गस्थितो यस्मात् साक्षिणो भवताखिलाः।।६।।

(भगवत्सेवामें गुरु–आज्ञाके पालन कियेतें भगवदाज्ञाको उल्लंघन अथवा भगवदाज्ञाके पालन कियेतें गुरु–आज्ञाको उल्लंघन होतो होवे तो अपने सेव्यप्रभुन्के विषयमें होती चिन्ताकों भगवत्सेवाके तात्पर्यको विवेक विचारिके दूर करि लेनी)

सेवाकृतिर् गुरोर् आज्ञा बाधनं वा हरीच्छया ।।
अतः सेवापरं चित्तं विधाय स्थीयतां सुखम्।।७।।

(या प्रकारके उपदेशके अनुसार जिनकों चिन्ता दूर करनी शक्य होय किंवा अशक्य तिनकों भगवल्लीलाकी भावना किंवा भगवच्छरणागतिकी भावना करिके दूर करि लेनी)

चित्तोद्वेगं विधायापि हरिर् यद्–यत् करिष्यति ।।
तथैव तस्य लीलेति मत्वा चिन्तां द्रुतं त्यजेत्।।८।।
तस्मात् सर्वात्मना नित्यं ‘‘श्रीकृष्णः शरणं मम’’ ।।
वदद्भिर् एवं सततं स्थेयम् इत्येव मे मतिः।।९।।

।।इति श्रीवल्लभाचार्यविरचितं नवरत्नं सम्पूर्णम्।।

।। अन्तःकरणप्रबोधः ।।

(भगवदाज्ञाके अनुसरण करिवेकों अन्तःकरणको प्रबोधन)

अन्तःकरण! मद्वाक्यं सावधानतया शृणु ।।
कृष्णात् परं नास्ति दैवं वस्तुतो दोषवर्जितम्।।१।।

(आत्मसमर्पण करिवेवारेको मनोरथ भगवदाज्ञातें प्रतिकूल

होयवेते पूर्ण न होय सके ता करि पश्चत्ताप न करनो)

चाण्डाली चेद् राजपत्नी जाता राज्ञा च मानिता ।।
कदाचिद् अपमानेऽपि मूलतः का क्षतिर् भवेत्।।२।।
समर्पणाद् अहं पूर्वम् उत्तमः किं सदा स्थितः ।।
का ममाधमता भाव्या पश्चात्तापो यतो भवेत्।।३।।

(भगवदाज्ञाकों अवश्य अनुसरनी, ताके तीन हेतु)

सत्यसंकल्पतो विष्णुः नान्यथा तु करिष्यति[१] ।।
आज्ञैव कार्या सततं स्वामिद्रोहो-ऽन्यथा भवेत्[२]।।४।।
सेवकस्य तु धर्मो-ऽयं स्वामी स्वस्य करिष्यति[३] ।।

(आचार्यचरणने जिन दो भगवदाज्ञान्को अनुसरण न कियो तिनकों वर्णन)

आज्ञा पूर्वन्तु या जाता गङ्गा-सागर-सङ्गमे।।५।।
यापि पश्चान् मधुवने न कृतं तद् द्वयं मया ।।

(लोकगोचर देह-देश परित्याग करिवेकी तृतीय भगवदाज्ञा[क] के अनुसरणमें पश्चात्तापको कोउ कारण नहीं है ताके छ हेतु)

देह-देश-परित्यागस् तृतीयो लोकगोचरः।।६।।
पश्चात्तापः कथं तत्र सेवको-ऽहं न चान्यथा[१] ।।
लौकिक-प्रभुवत् कृष्णो न द्रष्टव्यः कदाचन[२]।।७।।
सर्वं समर्पितं भक्त्या कृतार्थो-ऽसि[३] सुखी भव ।।
प्रौढापि दुहिता यद्वत् स्नेहात् न प्रेष्यते वरे।।८।।
तथा देहे न कर्तव्यं वरस् तुष्यति नान्यथा[४] ।।

लोकवच् चेत् स्थितिर् मे स्यात् किंस्याद् इति विचारय[५] ।।९।।
अशक्ये हरिरेवास्ति मोहं मा गाः कथञ्चन[६] ।।

(अपने अन्तःकरणको प्रबोधन करिके आचार्य महाप्रभुन्ने अपने स्वकीय जनन्की चिन्ता दूर करि दीनि सो जाननो)

इति श्रीकृष्णदासस्य वल्लभस्य हितं वचः।।१०।।
चित्तं प्रति यदाकर्ण्य भक्तो निश्चिन्ततां व्रजेत् ।।

।।इति श्रीवल्लभाचार्यविरचितो अन्तःकरणप्रबोधः सम्पूर्णः।।

।। विवेकधैर्याश्रयः ।।

(विवेक[क] धैर्य[ख] आश्रय[ग] के रक्षणकी आवश्यकता)

विवेक[क]-धैर्ये[ख] सततं रक्षणीये तथाश्रयः[ग] ।।

(विवेकको[क] स्वरूपलक्षण, ताकी प्राप्तिके चार उपाय: प्रार्थनात्याग[१] अभिमानत्याग[२] हठत्याग[३] तथा अनाग्रहः[४])

विवेकस्तु हरिः सर्वं निजेच्छातः करिष्यति[क] ।।१।।
प्रार्थिते वा ततः किं स्यात् स्वाम्यभिप्राय-संशयात् ।।
सर्वत्र तस्य सर्वं हि सर्वसामर्थ्यमेव च[१]।।२।।
अभिमानश् च सन्त्याज्यः स्वाम्यधीनत्व-भावनात् ।।
विशेषतश् चेद् आज्ञा स्याद् अन्तःकरण-गोचरः।।३।।
तदा विशेषगत्यादि भाव्यं भिन्नंतु दैहिकात्[२] ।।

आपद्–गत्यादि–कार्येषु हठस् त्याज्यश् च सर्वथा[३] ।।४।।
अनाग्रहश् च सर्वत्र धर्माधर्माग्र–दर्शनम्[४] ।।
विवेको–ऽयं समाख्यातो... ... ...।।

(धैर्यको[ख] स्वरूपलक्षण, वाकी प्राप्तिके सोदाहरण चार उपाय: [१]अनाग्रह [२]सहन [३]त्याग तथा [४]असामर्थ्यकी भावना)

... ... धैर्यन्तु विनिरूप्यते।।५।।
त्रिदु:ख–सहनं धैर्यम् आमृतेः सर्वतः सदा[ख] ।।
तक्रवद्[१] देहवद्[२] भाव्यं जडवद्[३] गोपभार्यवत्[४]।।६।।
प्रतीकारो यदृच्छातः सिद्धश् चेन् नाग्रही भवेत्[१] ।।
भार्यादीनां तथान्येषाम् असतश्चाक्रमं सहेत्[२]।।७।।
स्वयम् इन्द्रिय–कार्याणि काय–वाङ्–मनसा त्यजेत्[३] ।।
अशूरेणापि कर्तव्यं स्वस्यासामर्थ्य–भावनात्[४]।।८।।
अशक्ये हरिरेवास्ति सर्वम् आश्रयतो भवेत् ।।
एतत् सहनम् अत्रोक्तम्... ... ...।।

(आश्रयको[ग] स्वरूपलक्षण)

... ... आश्रयो–ऽतो निरूप्यते ।।९।।
ऐहिके पारलोके च सर्वथा शरणं हरिः[ग] ।।

(आगे कहे जाते हेतुन्[१-१२]मेंतें सभी हेतुन्की अथवा ऐसी ही अन्यहू काहु अवस्थामें भगवदाश्रय तो निभानो ही)

दु:खहानौ[१] तथा पापे[२] भये[३] कामाद्यपूरणे[४]।।१०।।

---

[३४] भगवत् सेवा, नाम या भागवत केलिये न तो किसीको देना चाहिये न ही लेना.

भक्तद्रोहे[५] भक्त्यभावे[६] भक्तैश् चातिक्रमे कृते[७] ।।
अशक्ये वा सुशक्ये वा सर्वथा शरणं हरिः।।११।।
अहंकार-कृते[८] चैव पोष्य-पोषण-रक्षणे[९] ।।
पोष्यातिक्रमणे[१०] चैव तथान्तेवास्यतिक्रमे[११]।।१२।।
अलौकिक-मनःसिद्धौ[१२] सर्वथा शरणं हरिः ।।

(भगवदाश्रयकी सिद्धिके चार उपायः आश्रयभावकी मानसिक-वाचिक भावना[१] अन्याश्रयत्याग[२] दृढविश्वास[३]; तथा शरणभावना हृदयमें दृढ राखिके जो कछु सहज प्राप्त होत होय ताको निर्ममसेवन[४])

एवं चित्ते सदा भाव्यं वाचा च परिकीर्तयेत्[१]।।१३।।
अन्यस्य भजनं तत्र स्वतो-गमनमेव च ।।
प्रार्थना कार्यमात्रेऽपि तथान्यत्र विवर्जयेत्[२] ।।१४।।
अविश्वासो न कर्तव्यः सर्वथा बाधकस्तु सः ।।
ब्रह्मास्त्र-चातकौ भाव्यौ[३] प्राप्तं सेवेत निर्ममः।।१५।।
यथाकथञ्चित् कार्याणि कुर्याद् उच्चावचान्यपि ।।
किंवा प्रोक्तेन बहुना शरणं भावयेद् हरिम्[४] ।।१६।।

(भगवदाश्रयकी आवश्यकताकी ओर उपपत्ति तथा उपसंहार)

एवम् आश्रयणं प्रोक्तं सर्वेषां सर्वदा हितम्।।
कलौ भक्त्यादिमार्गा हि दुःसाध्या इति मे मतिः।।१७।।

।।इति श्रीवल्लभाचार्यविरचितं विवेकधैर्याश्रयनिरूपणं सम्पूर्णम्।।

।। कृष्णाश्रयस्तोत्रम् ।।

या कलिकालमें लोकाश्रय[क] तथा वेदाश्रय[ख] तो फलहीन उपाय भये हैं परि श्रीकृष्णाश्रय[ग] तो अबहु निष्फल नाहिं. तातें धर्मके छ अङ्गः [१]काल [२]देश [३]द्रव्य [४]कर्ता [५]मन्त्र तथा [६]कर्म की वर्तमान समयमें असाधकता तथा कर्म[य] ज्ञान[र] भक्ति[ल] तथा प्रपत्ति[व] मार्गके अनुसारहू श्रीकृष्णाश्रय ही एक सांचो उपायहै

(लोकाश्रय[क] अब फलसाधक नाहिं तोउ कृष्णाश्रय[ग] की सफलताके निरूपणार्थ धर्मके छ अंगन्मेंतें [१]कालकी फलासाधकताको निरूपण)

सर्व–मार्गेषु नष्टेषु कलौ[१] च खल–धर्मिणि ।।
पाषण्ड–प्रचुरे लोके[क] कृष्णएव गतिर् मम[ग] ।।१।।

(लोकाश्रय[क] अब फलसाधक नाहिं तोउ कृष्णाश्रय[ग] की सफलताके निरूपणार्थ धर्मके छ अंगन्मेंतें [२]देशकी फलासाधकताको निरूपण)

म्लेच्छाक्रान्तेषु देशेषु[२] पापैक–निलयेषु च ।।
सत्पीडा–व्यग्र–लोकेषु[क] कृष्णएव गतिर् मम[ग] ।।२।।

(लोकाश्रय[क] अब फलसाधक नाहिं तोउ कृष्णाश्रय[ग] की सफलताके निरूपणार्थ धर्मके छ अंगन्मेंतें [३]द्रव्यकी फलासाधकताको निरूपण)

गङ्गादि–तीर्थ[३]–वर्येषु दुष्टैरेवावृतेष्विह[क] ।।
तिरोहिताधिदैवेषु कृष्णएव गतिर् मम[ग] ।।३।।

(वेदाश्रय[ख] अब फलसाधक नाहिं तोउ कृष्णाश्रय[ग] की सफलताके निरूपणार्थ धर्मके छ अंगन्मेंतें [४]कर्ताकी फलासाधकताको निरूपण)

अहंकार–विमूढेषु सत्सु[ख] पापानुवर्तिषु ।।

कहींके प्रसादका नहीं परन्तु अपने सेव्य प्रभुको समर्पित महाप्रसादका आग्रह रखो.

लाभ-पूजार्थ-यत्नेषु[४] कृष्णएव गतिर् मम[ग] ।।४।।

(वेदाश्रय[ख] अब फलसाधक नाहिं तोउ कृष्णाश्रय[ग] की सफलताके निरूपणार्थ धर्मके छ अंगन्मेंतें [५]मन्त्रकी फलासाधकताको निरूपण)

अपरिज्ञान-नष्टेषु मन्त्रे[५]ष्वव्रत-योगिषु ।।
तिरोहितार्थ-देवेषु[ख] कृष्णएव गतिर् मम[ग] ।।५।।

(वेदाश्रय[ख] अब फलसाधक नाहिं तोउ कृष्णाश्रय[ग] की सफलताके निरूपणार्थ धर्मके छ अंगन्मेंतें [६]कर्मकी फलासाधकताको निरूपण)

नाना-वाद-विनष्टेषु सर्व-कर्म[६]-व्रतादिषु[ख] ।।
पाषण्डैक-प्रयत्नेषु कृष्णएव गतिर् मम[ग] ।।६।।

(कर्ममार्ग[य] के विचारसुं हु कृष्णाश्रय[ग] की फलसाधकताको निरूपण)

अजामिलादि-दोषाणां नाशको[य]ऽनुभवे स्थितः।।
ज्ञापिताखिल-माहात्म्यः कृष्णएव गतिर् मम[ग] ।।७।।

(ज्ञानोपासनामार्ग[र] की दृष्टिसुं हु कृष्णाश्रय[ग] की फलसाधकताको निरूपण)

प्राकृताः सकला देवा गणितानन्दकं बृहत्[र] ।।
पूर्णानन्दो हरिस् तस्मात् कृष्णएव गतिर् मम[ग] ।।८।।

(भक्तिमार्ग[ल] के विचारसों हु कृष्णाश्रय[ग] की फलसाधकताको निरूपण)

विवेक-धैर्य-भक्त्यादि[ल]-रहितस्य विशेषतः।।
पापासक्तस्य दीनस्य कृष्णएव गतिर् मम[ग] ।।९।।

(प्रपत्तिमार्ग[व] के विचारसों हु कृष्णाश्रय[ग] की फलसाधकताको निरूपण)

सर्व-सामर्थ्य-सहितः सर्वत्रैवाखिलार्थकृत् ।।
शरणस्थ[व]समुद्धारं कृष्णं विज्ञापयाम्यहम्[ग] ।।१०।।
‘कृष्णाश्रयम्’ इदं स्तोत्रं यः पठेत् कृष्ण-सन्निधौ ।।
तस्याश्रयो[व] भवेत् कृष्ण[ग] इति श्रीवल्लभोऽब्रवीत्।।११।।

।। इति श्रीवल्लभाचार्यविरचितं कृष्णाश्रयस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।।

।। चतुःश्लोकी ।।

(पुष्टिभक्तिमार्गीय धर्मपुरुषार्थ व्रजाधिपको भजन है)

सर्वदा सर्व-भावेन भजनीयो व्रजाधिपः ।।
स्वस्यायमेव धर्मो हि नान्यः क्वापि कदाचन।।१।।

(पुष्टिभक्तिमार्गीय अर्थपुरुषार्थ श्रीहरि स्वयं हैं)

एवं सदा स्म कर्तव्यं स्वयमेव करिष्यति ।।
प्रभुः सर्वसमर्थो हि ततो निश्चिन्ततां व्रजेत्।।२।।

(पुष्टिभक्तिमार्गीय कामपुरुषार्थ श्रीहरिदर्शनकी लालसा है)

यदि श्रीगोकुलाधीशो धृतः सर्वात्मना हृदि ।।
ततः किम् अपरं ब्रूहि लौकिकैर् वैदिकैरपि ।।३।।

(पुष्टिभक्तिमार्गीय मोक्षपुरुषार्थ जीवनमें निभती भगवद्भजन-स्मरण-परायणता है)

अतः सर्वात्मना शश्वद् गोकुलेश्व-रपादयोः ।।
स्मरणं भजनं चापि न त्याज्यम् इति मे मतिः।।४।।

।। इति श्रीवल्लभाचार्यविरचिता चतुःश्लोकी सम्पूर्णा ।।

।। भक्तिवर्धिनी ।।

(दृढ बीजभाववारे[क] पुष्टिजीवन्के काज भक्तिकी फलात्मिका प्रवृद्धिके उपाय)

यथा भक्तिः प्रवृद्धा स्यात् तथोपायो निरूप्यते ।।
बीजभावे दृढे तु स्यात् त्यागात् श्रवण–कीर्तनात्[क] ।।१।।

(अदृढ बीजभाववारेन्में अव्यावृत्त[ख/१] तथा व्यावृत्त[ख/२] पुष्टि–जीवन्के काज भक्तिकी फलात्मिका प्रवृद्धिके उपाय)

बीज–दार्ढ्य–प्रकारस्तु गृहे स्थित्वा स्वधर्मतः ।।
अव्यावृत्तो भजेत् कृष्णं पूजया श्रवणादिभिः[ख/१] ।।२।।
व्यावृत्तोऽपि हरौ चित्तं श्रवणादौ न्यसेत् सदा[ख/२] ।।

(अदृढ बीजभाववारे व्यावृत्त[ख/२] जीवकों श्रवणादि कियेतें सांसारिक रागको विनाशक भगवत्प्रेम[य], घरमें अरुचि बढ़ायवेवारी भगवदासक्ति[र] तथा व्यसनदशा[ल] सिद्ध होत है जातें बीजभावके दृढ[व] होयवेपे भक्त कृतार्थ होय जात है)

ततः प्रेम[य] तथासक्तिः[र] व्यसनं[ल] च यदा भवेत् ।।३।।
बीजं तद् उच्यते शास्त्रे दृढं यन् नापि नश्यति[व] ।।
स्नेहाद् रागविनाशः[य] स्याद् आसक्त्या स्याद् गृहारुचिः[र] ।।४।
गृहस्थानां बाधकत्वम् अनात्मत्वं च भासते ।।
यदास्याद् व्यसनं[ल] कृष्णे कृतार्थः[व] स्यात् तदैव हि ।।५।।

(भगवान्में व्यसनभाववारो हु यदि व्यावृत्त होय तो सदा–सर्वदा घरमें ही रहिवो कबहूंक भक्तिभावमें बाधक होय सके तासों गृहत्यागकी प्रशंसा)

तादृशस्यापि सततं गेह-स्थानं विनाशकम् ।।
त्यागं कृत्वा यतेद् यस्तु तदर्थार्थैक-मानसः।।६।।
लभते सुदृढां भक्तिं सर्वतोऽप्यधिकां पराम् ।।

([१]संगदोष तथा अन्नदोष की भीति होय तो गृहत्यागको अनुकल्पः [२]भगवान्की सेवा-कथामें परायण भगवदीयन्सों न तो अतिदूर तथा न अतिसमीप ऐसे निवास करिके सेवा-परिचर्या तथा कथाश्रवण निभायवेको प्रयास करनो)

त्यागे बाधक-भूयस्त्वं [१]दुःसंसर्गात् तथान्नतः।।७।।
अतः स्थेयं हरिस्थाने तदीयैः सह तत्परैः ।।
[२]अदूरे विप्रकर्षे वा यथा चित्तं न दुष्यति।।८।।

(निजघरमें अथवा कोउ निजजनके घरमें हू भगवत्सेवा-कथामें जो परायण होय ताकी भक्तिको नाश कबहूं होत नाहिं)

सेवायां वा कथायां वा यस्यासक्तिर् दृढा भवेत् ।।
यावज्जीवं तस्य नाशो न क्वापीति मतिर् मम।।९।।

(भक्तिभावके खण्डित होयवेकी सम्भावनामें एकान्तमें वास करनो उचित नाहिं)

बाध-सम्भावनायान्तु नैकान्ते वास इष्यते ।।
हरिस् तु सर्वतो रक्षां करिष्यति न संशयः।।१०।।

(ग्रन्थोपसंहार तथा ग्रन्थके पाठको फल)

इत्येवं भगवच्-छास्त्रं गूढतत्त्वं निरूपितम् ।।
य एतत् समधीयीत तस्यापि स्याद् दृढा रतिः।।११।।

।।इति श्रीवल्लभाचार्यविरचिता भक्तिवर्धिकी सम्पूर्णा।।

।। जलभेदः ।।

(‘‘कूप्याभ्यः स्वाहा... सर्वाभ्यः स्वाहा’’ (तैत्ति.संहि. ७।४।१२) वचनमें जो बीस प्रकारके जलके भेदको वर्णन भयो है तैसेइ भगवत्कथा करिवेवारेन्के हू अप्रकीर्ण(१-१९)=वर्गीकृत तथा प्रकीर्ण(२०) =अवर्गीकृत भाव बीस प्रकारके होय सके हैं. तहां अप्रकीर्ण भावन्में: विषयासक्तवक्ता(क१-५) मुमुक्षुवक्ता(ख६-१८) विमुक्तवक्ता(ग१९) ऐसे तीन उपभेद होत हैं. तहां विप्रकीर्ण भाववारेन्के(२०) उपभेद तो अगणित हैं.)

नमस्कृत्य हरिं वक्ष्ये तद्गुणानां विभेदकान् ।।
भावान् विंशतिधा भिन्नान् सर्वसन्देह–वारकान्।।१।।
गुणभेदास्तु तावन्तो यावन्तो हि जले मताः ।।

(‘‘कूप्याभ्यः स्वाहा’’वचनमें कहे जल जेसो विषयासक्त वक्ताको अनिन्द्य भाव[क-१])

गायकाः कूपसंकाशा ‘गन्धर्वा’ इति विश्रुताः।।२।।
कूप–भेदास्तु यावन्तस् तावन्तस् तेऽपि सम्मताः ।।

(‘‘कूल्याभ्यः स्वाहा’’ वचनमें कहे जल जेसो विषयासक्त वक्ताको निन्द्य भाव[क-२])

‘कुल्याः’ पौराणिकाः प्रोक्ताः पारम्पर्ययुता भुवि।।३।।

(‘‘विकर्याभ्यः स्वाहा’’ वचनमें कहे जल जेसो विषयासक्त वक्ताको निन्द्य भाव[क-३])

क्षेत्र–प्रविष्टास् ते चापि संसारोत्पत्ति–हेतवः ।।

(‘‘अवट्याभ्यः स्वाहा’’ वचनमें कहे जल जेसो विषयासक्त वक्ताको निन्द्य भाव[क-४])

वेश्यादि–सहिता मत्ता गायका ‘गर्त’संज्ञिताः।।४।।

(‘‘खन्याभ्यः स्वाहा’’ वचनमें कहे जल जेसो विषयासक्त वक्ताको निन्द्य भाव[क-५])

जलार्थमेव गर्तास् तु नीचा गानोपजीविनः ।।

(‘‘ह्रद्याभ्यः स्वाहा’’ वचनमें कहे जल जेसो कर्ममार्गीय मुमुक्षु वक्ताको भाव[ख-६])

‘ह्रदा’स्तु पण्डिताः प्रोक्ता भगवच्–छास्त्रतत्पराः।।५।।

(‘‘सूद्याभ्यः स्वाहा’’वचनमें कहे जल जेसो कर्ममार्गीय मुमुक्षु वक्ताको भाव[ख-७])

सन्देह–वारकास् तत्र ‘सूदा’ गम्भीर–मानसाः ।।

(‘‘सरस्याभ्यः स्वाहा’’वचनमें कहे जल जेसो कर्ममार्गीय मुमुक्षु वक्ताको भाव[ख-८])

‘सरः–कमल–सम्पूर्णाः’ प्रेम–युक्तास्तथा बुधाः।।६।।

(‘‘वैशन्तीभ्यः स्वाहा’’वचनमें कहे जल जेसो कर्ममार्गीय मोक्षकामी वक्ताको भाव[ख-९])

अल्पश्रुताः प्रेमयुक्ता ‘वेशन्ताः’ परिकीर्तिताः ।।

(‘‘पल्वल्याभ्यः स्वाहा’’वचनमें कहे जल जेसो कर्ममार्गीय मुमुक्षु वक्ताको भाव[ख-१०])

कर्मशुद्धाः ‘पल्वलानि’ तथाल्पश्रुत–भक्तयः।।७।।

(‘‘वर्ष्याभ्यः स्वाहा’’वचनमें कहे जल जेसो ज्ञानमार्गीय मुमुक्षु वक्ताको भाव[ख-११])

योग–ध्यानादि–संयुक्ता गुणा ‘वर्ष्याः’ प्रकीर्तिताः ।।

(‘‘स्वेदजाभ्यः स्वाहा’’वचनमें कहे जल जेसो ज्ञानमार्गीय मुमुक्षु वक्ताको भाव[ख-१२])

तपो–ज्ञानादि–भावेन ‘स्वेदजास्’तु प्रकीर्तिताः।।८।।

दक्षिणा लेकर कथा करनेवालेके मुखसे कथा सुनना गटरका पानी पीने समान है.

(“ह्रादुनीभ्यः स्वाहा”वचनमें कहे जल जेसो ज्ञानमार्गीय मुमुक्षु वक्ताको भाव[ख-१३])

अलौकिकेन ज्ञानेन ये तु प्रोक्ता हरेर् गुणाः ।।
कादाचित्काः शब्दगम्याः ‘पतच्छब्दाः’ प्रकीर्तिताः।।९।।

(“पृष्वाभ्यः स्वाहा”वचनमें कहे जल जेसो उपासनामार्गीय मुमुक्षु वक्ताको भाव[ख-१४])

देवाद्युपासनोद्भूताः ‘पृष्वा’ भूमेर् इवोद्गताः ।।

(“स्यन्दमानाभ्यः स्वाहा”वचनमें कहे जल जेसो उपासनामार्गीय मुमुक्षु वक्ताको भाव[ख-१५])

साधनादि-प्रकारेण नवधा भक्तिमार्गतः।।१०।।
प्रेमपूर्त्या स्फुरद्धर्माः ‘स्यन्दमानाः’ प्रकीर्तिताः ।।

(“स्थावराभ्यः स्वाहा”वचनमें कहे जल जेसो उपासनामार्गीय मोक्षकामी वक्ताको भाव[ख-१६])

यादृशास् तादृशाः प्रोक्ता वृद्धि-क्षय-विवर्जिताः।।११।।
‘स्थावरास्’ ते समाख्याता मर्यादैक-प्रतिष्ठिताः ।।

(“नादेयीभ्यः स्वाहा”वचनमें कहे जल जेसो उपासनामार्गीय मुमुक्षु वक्ताको भाव[ख-१७])

अनेक-जन्म-संसिद्धा जन्म-प्रभृति सर्वदा।।१२।।
सङ्गादि-गुण-दोषाभ्यां वृद्धि-क्षय-युता भुवि ।।
निरन्तरोद्गमयुता ‘नद्यस्’ ते परिकीर्तिताः।।१३।।

(“सैन्धवीभ्यः स्वाहा”वचनमें कहे जल जेसो भक्तिमार्गीय मुमुक्षु प्रवक्ताको भाव[ख-१८])

एतादृशाः स्वतन्त्राश् चेत् ‘सिन्धवः’ परिकीर्तिताः ।।

(‘‘समुद्रीयाभ्यः स्वाहा’’ विमुक्त वक्तान्के भाव भगवान्के लोक–वेदप्रसिद्ध, अप्रसिद्ध किंवा उभयमिश्रित गुणन्के वर्णन करिवेवारे क्षारदि पांच समुद्रन्के जल जेसे पञ्चविध भाव[ग-११]. विमुक्तन्में हु छठे अमृतसमुद्र जेसे अति–उत्तम प्रवक्तान्के भाव भगवान्के सच्चिदानन्दात्मक अप्राकृत गुणन्के वर्णन करिवेके होयवेतें इनके अत्युत्तम भावकों[ग-१०] अमृतोदधिके जल जेसे समझनो)

पूर्णा भगवदीया ये शेष–व्यासाग्नि–मारुताः।।१४।।
जड–नारद–मैत्राद्यास् ते ‘समुद्राः’ प्रकीर्तिताः ।।
लोक–वेद–गुणैः मिश्र–भावेनैके हरेर् गुणान्।।१५।।
वर्णयन्ति समुद्रास् ते ‘क्षाराद्याः षट्’ प्रकीर्तिताः ।।
गुणातीततया शुद्धान् सच्चिदानन्दरूपिणः।।१६।।
सर्वान् एव गुणान् विष्णोर् वर्णयन्ति विचक्षणाः ।।
ते‘ऽमृतोदाः’ समाख्यातास् तद्–वाक्पानं सुदुर्लभम्।।१७।।
तादृशानां क्वचिद् वाक्यं दूतानाम् इव वर्णितम् ।।

(अमृतोदधिके जल जेसे भाववारे वक्तान्के भावकी ओर हु एक विशेषता)

अजामिलाकर्णनवद् बिन्दुपानं प्रकीर्तितम्।।१८।।
रागाज्ञानादि–भावानां सर्वथा नाशनं यदा ।
तदा लेहनम् इत्युक्तं स्वानन्दोद्गम–कारणम्।।१९।।

(‘‘सर्वाभ्यः स्वाहा’’वचनमें कहे जल जेसे बीसमें विप्रकीर्ण= अवर्गीकृत भाव[२०])

उद्धृतोदकवत् ‘सर्वे’ पतितोदकवत् तथा ।।

कथाकेलिए दक्षिणा लेनेवालेको आदर देना पापीको पूजने समान बात है.

उक्तातिरिक्त–वाक्यानि फलं चापि तथा ततः।।२०।।

(ग्रन्थको उपसंहार)

इति जीवेन्द्रियगता नाना–भावं–गता भुवि ।।
रूपतः फलतश् चैव गुणा विष्णोर् निरूपिताः।।२१।।

।। इति श्रीवल्लभाचार्यविरचितो जलभेदः सम्पूर्णः ।।

।। पञ्चपद्यानि ।।

भक्ति[क] तथा प्रपत्ति[ख] मार्गोके भेदतें भगवत्कथाके श्रोतान्के मुख्य दो भेद होत हैं. तहां भक्तिमार्गमें उत्तमाधिकार[१] मध्यमाधिकार[२] तथा कनिष्ठाधिकार[३] यों तीन प्रकार होत हैं

(भक्तिमार्गीय उत्तमाधिकारी श्रोताको स्वरूप[क-१])

श्रीकृष्ण–रस–विक्षिप्त–मानसा रति–वर्जिताः ।।
अनिर्वृता लोक–वेदे ते मुख्याः[क/१] श्रवणोत्सुकाः।।१।।

(भक्तिमार्गीय मध्यमाधिकारी श्रोताको स्वरूप[क-२])

विक्लिन्न–मनसो ये तु भगवत्–स्मृति–विह्वलाः ।।
अर्थैक–निष्ठास् ते चापि मध्यमाः[क/२] श्रवणोत्सुकाः।।२।।

(भक्तिमार्गीय कनिष्ठाधिकारी श्रोताको स्वरूप[क-३])

निःसन्दिग्धं कृष्ण–तत्त्वं सर्वभावेन ये विदुः ।।
ते त्वावेशात्तु विकला निरोधाद् वा नचान्यथा।।३।।
पूर्ण–भावेन पूर्णार्थाः कदाचित् नतु सर्वदा ।।
अन्यासक्तास्तु ये केचिद् अधमाः[क/३] परिकीर्तिताः।।४।।

कथाकी दक्षिणा लेना, पारसमणिके पात्रमें भीख मांगने जैसी हास्यास्पद बात है.

(प्रपत्तिमार्गीय उत्तमाधिकारी श्रोताको स्वरूप[ख])

अनन्य-मनसो मर्त्या उत्तमाः श्रवणादिषु ।।
देश-काल-द्रव्य-कर्तृ-मन्त्र-कर्म-प्रकारतः।।५।।

।। इति श्रीवल्लभाचार्यविरचितानि पञ्चपद्यानि ।।

।। संन्यासनिर्णयः ।।

(कर्ममार्ग[श] भक्तिमार्ग[ष] तथा ज्ञानमार्ग[स] के भेदसों संन्यासके तीन प्रकार होत हैं. तहां कर्ममार्गीय संन्यासके दो प्रकारः कर्मफलत्यागरूप[श-१] तथा चतुर्थाश्रमरूप[श-२]. भक्तिमार्गीय संन्यासकी साधनदशामें[ष-१] भक्तिसाधनाके निर्वाहार्थ[ष-१-क] तथा भक्तिमें बाधक गृहादिके त्यागार्थ[ष-१-ख] ऐसे दो भेद. तेसेइ सिद्धदशामें[ष-२] भक्त्युत्तर विरहानुभवोत्तर[ष-२-क] तथा भक्तिमार्गीय विरहानुभवार्थ[ष-२-ख] ऐसे दो भेद होत हैं. तेसेइ ज्ञानमार्गीय संन्यासके हु ज्ञानार्थ संन्यास[स-१] तथा ज्ञानोत्तर संन्यास[स-२] ऐसे दो उपभेद हैं. इनमें कोनसो संन्यास करनो तथा कोनसो न करनो ताकी विचारणा)

पश्चात्ताप-निवृत्त्यर्थं परित्यागो विचार्यते ।।
स मार्गद्वितये प्रोक्तो भक्तौ ज्ञाने विशेषतः।।१।।

(तहां बाह्यत्यागकी अपेक्षा न रहवेतें कर्मफलन्की लालसाके त्यागरूप संन्यासकी[श-१] तो कछु विचारणीयता नाहिं. कर्ममार्गीय द्वितीय प्रकारको संन्यास[श-२] कलिकालमें सुशक्य न होयवेतें ताकी विचारणा प्रसक्त होयवेपे हू सो संन्यास कलिकालमें शक्य नाहिं)

कर्ममार्गे न कर्तव्यः सुतरां कलिकालतः ।।

(भक्तिकी साधनदशामें श्रवणादिके निर्वाहार्थ संन्यास[ष-१-क]

अनुष्ठेय नाहिं, ताके चार हेतु[१,२,३,४])

अत आदौ भक्तिमार्गे कर्तव्यत्वाद् विचारणा।।२।।
श्रवणादि–प्रसिद्ध्यर्थं कर्तव्यश् चेत् स नेष्यते ।।
सहाय–सङ्ग–साध्यत्वात्[१] साधनानां च रक्षणात्[२]।।३।।
अभिमानात् नियोगात्[३] च तद्–धर्मैश्च विरोधतः[४]।।

(भक्तिकी साधनदशामें भक्तिके बाधक ऐसे गृहादिके त्यागार्थ संन्यास[ष-१-ख] हू अनुष्ठेय नाहिं ताके दोय हेतु[१तथा२])

गृहादेः बाधकत्वेन साधनार्थं तथा यदि।।४।।
अग्रेऽपि तादृशैर् एव सङ्गो भवति नान्यथा ।।
स्वयञ्च विषयाक्रान्तः पाषण्डी स्यात्तु कालतः।।५।।
विषयाक्रान्त–देहानां नावेशः सर्वदा हरेः ।।
अतो–ऽत्र साधने भक्तौ नैव त्यागः सुखावहः।।६।।

(भक्तिकी सिद्धदशामें विरहानुभवोत्तर संन्यास[ष-२-क] तो प्रपञ्च–विस्मृतिपूर्वक भगवदासक्तिरूप निरोध सिद्ध होय जावेतें बाह्यत्यागकी आवश्यकता कछु रहत नाहिं, त्यागनिर्वाहक वैराग्य तो उत्कृष्टभक्तिके स्वभाववश सिद्ध होवेतें ताके कर्तव्य किंवा अकर्तव्य के विचारकी हू आवश्यकता नाहिं. तातें भक्तिकी सिद्धदशामें विरहानुभवार्थ संन्यास[ष-२-ख] भक्तिभावकी दृढताकों निभायवेके हेतु प्रशस्त मान्यो जात है)

विरहानुभवार्थन्तु परित्यागः प्रशस्यते ।।

(संन्यास[ष-२-ख] के प्रकारमें वेश[१] गुरु[२] साधकभावोद्बोधनके उपाय[३] तथा [४]बाधकन् को निरूपण)

तनुवित्तजासेवा = अपने घरमें अपने ही वित्तसे स्वयं प्रभुकी सेवा करना.

स्वीय-बन्ध-निवृत्त्यर्थं वेशः सोऽत्र न चान्यथा[१]।।७।।
कौण्डिन्यो गोपिकाः प्रोक्ताः गुरवः[२] साधनं च तद्-।।
भावो भावनया सिद्‌धः साधनं नान्यद् इष्यते[३]।।८।।
विकलत्वं तथास्वास्थ्यं प्रकृतिः, प्राकृतं न हि ।।
ज्ञानं गुणाश्च तस्यैवं वर्तमानस्य बाधकाः[४]।।९।।

(संन्यास[ष-२-ख] के या प्रकारकी फलावस्थाको निरूपण)

सत्यलोके स्थितिर् ज्ञानात् संन्यासेन विशेषितात् ।
भावना साधनं यत्र फलं चापि तथा भवेत्।।१०।।
तादृशाः सत्यलोकादौ तिष्ठन्त्येव न संशयः ।
बहिश् चेत् प्रकटः स्वात्मा वह्निवत् प्रविशेद् यदि।।११।।
तदैव सकलो बन्धो नाशमेति न चान्यथा ।।
गुणास्तु सङ्ग-राहित्याद् जीवनार्थं भवन्ति हि।।१२।।
भगवान् फलरूपत्वात् नात्र बाधक इष्यते ।।
स्वास्थ्य-वाक्यं न कर्तव्यं दयालुर् न विरुध्यते।।१३।।
दुर्लभो-ऽयं परित्यागः प्रेम्णा सिध्यति नान्यथा ।।

(ज्ञानमार्गीय संन्यासके दो प्रकारन्मेंते ज्ञानार्थ[स-१] तथा ज्ञानोत्तर[स-२] मेंते प्रथम प्रकारको कर्तव्य नाहिं है ताके चार हेतु[१,२,३,४] तथा द्वितीय तो कलिकालमें अतिदुर्लभ है)

ज्ञानमार्गे तु संन्यासो द्विविधोऽपि विचारितः।।१४।।
ज्ञानार्थम्[स-१] उत्तराङ्गं[स-२] च सिद्धिर् जन्मशतैः परम्[१] ।।

ज्ञानं च साधनापेक्षं यज्ञादि-श्रवणान् मतम्[२]।।१५।।
अतः कलौ स संन्यासः पश्चात्तापाय नान्यथा[३] ।।
पाषण्डित्वं भवेत् चापि तस्माज् ज्ञाने न संन्यसेत्।।१६।।
सुतरां कलिदोषाणां प्रबलत्वाद् इति स्थितिः[४] ।।

(ज्ञानमार्गीय संन्यासकी न्यांइ कलिकालजन्य दोष भक्तिमार्गीय संन्यासमें हु क्यों न संभवे ? या शंका को समाधान[१,२,३,४,५])

भक्तिमार्गेऽपि चेद् दोषः तदा किं कार्यम् उच्यते।।१७।।
अत्रारम्भे न नाशः स्याद्[१] दृष्टान्तस्याप्यभावतः[२] ।।
स्वास्थ्यहेतोः परित्यागाद् बाधः केनास्य सम्भवेत् ?[३] ।।१८।।
हरिर् अत्र न शक्नोति कर्तुं बाधां कुतो-ऽपरे ।।
अन्यथा मातरो बालान् न स्तन्यैः पुपुषुः क्वचित्[४] ।।१९।।
ज्ञानिनाम् अपि वाक्येन न भक्तं मोहयिष्यति ।।
आत्मप्रदः प्रियश्चापि किमर्थं मोहयिष्यति ?[५] ।।२०।।
तस्माद् उक्त-प्रकारेण परित्यागो विधीयताम् ।।
अन्यथा भ्रश्यते स्वार्थाद् इति मे निश्चिता मतिः।।२१।।

(ग्रन्थोपसंहार)

इति कृष्ण-प्रसादेन वल्लभेन विनिश्चितम् ।।
संन्यासवरणं भक्तौ अन्यथा पतितो भवेत्।।२२।।

।। इति श्रीवल्लभाचार्यविरचितः संन्यासनिर्णयः सम्पूर्णः ।।

।। निरोधलक्षणम् ।।

(प्रपञ्चविस्मृतिपूर्वक भगवदासक्तिरूप निरोधावस्थाके परिपाकार्थ भगवत्सेवा तथा भगवत्कथा दोनोंमें परायण पुष्टिभक्तकों सेवाके अनवसरमें=कथाकालमें प्रभुकी गोचारणकालिक वृन्दावन-लीलाको अनुसन्धान अपने हृदयमें लायके अपने घरमें वियोगकी भावना करनी[1]. तेसेइ सेवाके समय गोकुलस्थित प्रभुके संयोग[2]की भावना करनी)

यच्च दुःखं यशोदाया नन्दादीनां च गोकुले ।।
गोपिकानांतु यद् दुःखं तद् दुःखं स्यान्ममक्वचित्[1] ।।१।।
गोकुले गोपिकानां च सर्वेषां व्रजवासिनाम् ।।
यत् सुखं समभूत् तन्मे भगवान् किं विधास्यति[2] ।।२।।

(गोकुल तथा वृन्दावन में गोप-गोपिकान्कों भगवान्को संदेश लेके उद्धवजीके आगमनतें भगवद्वार्ताको सुमहान् महोत्सव भयो हतो. तेसेइ भगवत्सेवा करिवे जो समर्थ न होंय तिनकों वेसे महोत्सवकी भावनाके साथ भगवदीयन्के साथ भगवद्वार्ता किंवा भगवद्गुणगान करिवेतें हु भक्ति निरोधावस्था तक पहोंच सकेहै)

उद्धवागमने जात उत्सवः सुमहान् यथा ।।
वृन्दावने गोकुले वा तथा मे मनसि क्वचित् ।।३।।
महतां कृपया यावद् भगवान् दययिष्यति ।।
तावद् आनन्द-सन्दोहः कीर्त्यमानः सुखाय हि ।।४।।
महतां कृपया यद्वत् कीर्तनं सुखदं सदा ।।
न तथा लौकिकानां तु स्निग्ध-भोजन-रूक्षवत् ।।५।।
गुणगाने सुखावाप्तिः गोविन्दस्य प्रजायते ।।

यथा तथा शुकादीनां नैवात्मनि कुतोऽन्यतः।।६।।
क्लिश्यमानान् जनान् दृष्ट्वा कृपायुक्तो यदा भवेत् ।।
तदा सर्वं सदानन्दं हृदिस्थं निर्गतं बहिः।।७।।
सर्वानन्द-मयस्यापि कृपानन्दः सुदुर्लभः ।।
हृद्गतः स्वगुणान् श्रुत्वा पूर्णः प्लावयते जनान्।।८।।
तस्मात् सर्वं परित्यज्य निरुद्धैः सर्वदा गुणाः ।।
सदानन्दपरैर् गेयाः सच्चिदानन्दता ततः।।९।।

(प्रपञ्चविस्मृतिपूर्विका भगवदासक्तिरूपा भक्ति सर्वातिशायिनी है, तामें आचार्यचरण अपने अनुभवकों प्रमाण बतायके पुष्टिमार्गमें ताके उपदेशकी आवश्यकता दिखावत हैं)

अहं निरुद्धो रोधेन निरोध-पदवीं गतः ।।
निरुद्धानां तु रोधाय निरोधं वर्णयामि ते।।१०।।
हरिणा ये विनिर्मुक्तास् ते मग्ना भवसागरे ।।
ये निरुद्धास् तएवात्र मोदम् आयान्त्यहर्निशम्।।११।।

(प्रपञ्चविस्मृतिपूर्विका भगवदासक्तिके सिद्ध्यर्थ सकल देहेन्द्रियादिकन्‌को भगवान्‌में विनियोग करनो चहिये. तासों ही भक्तिको निरोधावस्थामें परिपाक होत है)

संसारावेश-दुष्टानाम् इन्द्रियाणां हिताय वै ।।
कृष्णस्य सर्ववस्तूनि भूम्न ईशस्य योजयेत्।।१२।।
गुणेष्वाविष्ट-चित्तानां सर्वदा मुरवैरिणः ।।
संसार-विरह-क्लेशौ न स्यातां हरिवत् सुखम्।।१३।।

जिन घर-धनादिका विनियोग कृष्णसेवामें नहीं किया जाता है वो त्याज्य हैं.

तदा भवेद् दयालुत्वम् अन्यथा क्रूरता मता ।।
बाधशंकापि नास्त्यत्र तदध्यासोऽपि सिध्यति।।१४।।
भगवद्–धर्म–सामर्थ्याद् विरागो विषये स्थिरः ।।
गुणैर् हरि–सुख–स्पर्शात् न दुःखं भाति कर्हिचित्।।१५।।
एवं ज्ञात्वा ज्ञानमार्गाद् उत्कर्षो गुण–वर्णने ।।
अमत्सरैर् अलुब्धैश्च वर्णनीयाः सदा गुणाः।।१६।।

(सकल देहेन्द्रियादिकन्को भगवान्में विनियोग कियेतें ही तिनमें वगवद्व्यसन सिद्ध होत है, जासों प्रापञ्चिक विषयन्में आसक्ति हु क्षीण होत है)

हरिमूर्तिः सदा ध्येया संकल्पाद् अपि तत्र हि ।।
दर्शनं स्पर्शनं स्पष्टं तथा कृतिगती सदा।।१७।।
श्रवणं कीर्तनं स्पष्टं पुत्रे कृष्णप्रिये रतिः ।।
पायोर् मलांश–त्यागेन शेषभागं तनौ नयेत्।।१८।।
यस्य वा भगवत्कार्यं यदा स्पष्टं न दृश्यते ।।
तदा विनिग्रहस् तस्य कर्तव्य इति निश्चयः।।१९।।

(निरोधावस्थापन्न भक्तितें उत्कृष्टतर पुष्टिमार्गमें ओर कछु सम्भवे ही नहीं)

नातः परतरो मन्त्रो नातः परतरः स्तवः ।।
नातः परतरा विद्या तीर्थं नातः परात् परम्।।२०।।

।। इति श्रीवल्लभाचार्यप्रकटितं निरोधलक्षणम् सम्पूर्णम् ।।

---

५२ वेदनिन्दा और अधर्माचरण न किया जाय तो भक्तिमार्गसे उद्धार होता है.

।। सेवाफलम् ।।

(सेवा करिवेवारेन्कुं वाकी फलरूपता तीनमेंते कोउ एक तरहसों अनुभूत होत है: अलौकिकसामर्थ्य[क] सायुज्य[ख] तथा वैकुण्ठादि लोकन्में सेवोपयोगिदेह[ग])

यादृशी सेवना प्रोक्ता तत्सिद्धौ फलम् उच्यते ।।
अलौकिकस्य[क] दाने हि चाद्यः सिध्येन् मनोरथः।।१।।
फलं[ग] वा ह्यधिकारो[ख] वा न कालोऽत्र नियामकः ।।

(सेवा करत तामें प्रतिबन्धक हु तीन तरहके आय सके हैं: उद्वेग[च] प्रतिबन्ध[छ] तथा भोग[ज] . तासों इन तीनोंन्के साधनन्को परित्याग करनो. भोगके दोय प्रकार होत हैं: लौकिक[ज/१] तथा अलौकिक[ज/२] . तामें लौकिकभोग तो त्याज्य है; अलौकिकभोगको समावेश तो फल[क] के पहेले प्रकारमें होत है. तेसेइ प्रतिबन्ध हु द्विविध हैं: साधारण[छ/१] तथा भगवत्कृत[छ/२] . तामें साधारण प्रतिबन्धको[छ/१] त्याग बुद्धिसों करनो चइये. प्रतिबन्ध यदि भगवान्द्वारा[छ/२] भयो होय तो भगवान्की फलदानकी इच्छा नाहीं है ऐसे माननो. तब अन्य काहुकी सेवा हु व्यर्थ ह्वै जात है. तासो एसे जीवकों आसुरावेशी जाननो. तब ज्ञानमार्गको आश्रय लेके रहेनो जासों शोकतें बच्यो जा सके. उद्वेगके निवारणको उपाय तो नवरत्न ग्रन्थमें निरूपित भयो ही हे सो यहां ताके निरूपणकी आवश्यकता नाहीं है.)

उद्वेगः[च] प्रतिबन्धो[छ/१-२] वा भोगो[ज/१] वा स्यात् तु बाधकम्।।२।।
अकर्तव्यं भगवतः[छ/२] सर्वथा चेद् गतिर् न हि ।।
यथा वा तत्त्वनिर्धारो विवेकः साधनं मतम्।।३।।
बाधकानां परित्यागो भोगे[ज/१]ऽप्येकं तथा परम् ।।
निष्प्रत्यूहं महान् भोगः[ज/२] प्रथमे[क] विशते सदा।।४।।

(तहां साधारण भोग[ज-१] तो सविघ्न होयवेते अरु अल्प होयवेतें त्याज्य ही है. तासों अल्प भोग किंवा सविघ्न भोग इन दोनोंन्को प्रतिबन्धक ही जानें. दूसरो भगवत्कृत जो प्रतिबन्ध[छ/२] होय तब तो ज्ञानमार्गको हु आश्रय सुलभ न होयगो. तासों उत्कृष्ट फलन्की[क/ख/ग] चिन्ता ही तजि देवो एक उपाय रहि जात है)

सविघ्नोऽल्पो[ज/१] घातकः स्याद् बलाद् एतौ सदा मतौ ।।
द्वितीये[छ/२] सर्वथा चिन्ता त्याज्या संसार–निश्चयात्।।५।।

(अंशतः हु आद्यफल सिद्ध न होतो होय तो भगवान् ताको दान अभी करनो चाहें नहीं है ऐसे समझनो. तब अपनी भगवत्सेवाकों आधिदैविक न जानिये. समर्पणके अनिर्वाहमें भोग तो तब ही छूटे जब कथाप्रणालीसों व्यसनदशा सिद्ध होवे अरु गृहपरित्याग करिवो शक्य ह्वै जाय)

नत्वाद्ये दातृता नास्ति तृतीये बाधकं गृहम् ।।

(फलदान तो भगवदिच्छाधीन हे. अन्य काहु बातको यापे बस नाहीं. सो काहेंते जो भगवदिच्छाके सिवा अन्य बातन्में हेतुबुद्धि मनोभ्रम हे[१]. भगवान् हु पुष्टिजीवकों पुष्टिफलके दानमें विलम्ब न करेंगे एसे भगवदीयकों विश्वास राखिके भजनमें तत्पर रहनो[२]. भक्तन्के अन्तःकरणमें तामस आदि गुणन्के कारण होती शंका––कुशंकान्कों हु भ्रमणा जानि या उपदेशकों भूलनो नाहिं[३])

अवश्येयं सदा भाव्या सर्वम् अन्यन् मनोभ्रमः[१]।।६।।
तदीयैर् अपि तत्कार्यं पुष्टौ नैव विलम्बयेत्[२] ।।
गुणक्षोभेऽपि द्रष्टव्यम् एतदेवेति मे मतिः।।७।।
कुसृष्टिर् अत्र वा काचिद् उत्पद्येत स वै भ्रमः[३]।।

।। इति श्रीवल्लभाचार्यविरचितं सेवाफलं सम्पूर्णम् ।।

---

[५४] जो कृष्णसे विमुख होगा वह कलिके प्रवाहमें बह जायेगा.

।। पञ्चश्लोकी ।।

भक्तिवर्धिनी ग्रन्थमें कह्यो ता प्रकारसों पुष्टिभक्तिमार्गमें दृढ बीजभाववारे[क] अदृढबीजभाववारे अव्यावृत्त[ख-१] व्यावृत्त[ख-२] एसे अधिकारीन्कों; अथच पुष्टिप्रपत्तिमार्गके अधिकारिन्कों हु जो त्याज्य है किंवा जो ग्राह्य है सो वो ग्रहण किंवा त्याग केसे करनो ताको उपदेश.

(निज घरमें जे भगवत्सेवा करिवे समर्थ न होंय तोउ भगवत्कथाकी प्रणालिकासों जिनको बीजभाव दृढ भयो होय तेसे अधिकारीन्कों क गृहत्यागकी अनुज्ञा. बीजभाव दृढ न भयो होय तो अव्यावृत्तन्कों[ख-१] निज घरमें भगवत्सेवा करिवेकी आज्ञा)

गृहं सर्वात्मना त्याज्यं[क] तच् चेत् त्यक्तुं न शक्यते ।।
कृष्णार्थे तत् प्रयुंजीत[ख/१] कृष्णो-ऽनर्थस्य मोचकः।।१।।

(अदृढ़ बीजभाववारो व्यावृत्त[ख-२] होय तो ताकों निज घरतें अन्यत्र हु भगवत्सेवा-भगवत्कथामें परायण भगवदीयन्के संग भगवत्परिचर्या तथा भगवत्कथश्रवण में परायण होयवेकों सत्संग कौनके साथ करनो ताको उपदेश)

संगः सर्वात्मना त्याज्यः स चेत् त्यक्तुं न शक्यते ।।
स सद्भिः सह कर्तव्यः सन्तः सङ्गस्य भेषजम्।।२।।

(अदृढ बीजभाववारो अव्यावृत्त[ख-१] होय तो ताकों जो भगवत्सेवामें निज घरको विनियोग जतायो सो केसे करनों ताकी रीतिको उपदेश)

अनुकूले कलत्रादौ विष्णोः कार्याणि कारयेत् ।।
उदासीने स्वयं कुर्यात् प्रतिकूले गृहं त्यजेत्।।३।।
तत्-त्यागे दूषणं नास्ति यतः कृष्ण-बहिर्मुखाः ।।

(पुष्टिप्रपत्ति[ग] मार्गमें शरणागतिकी छ रीतिन्को उपदेश[१-६])

अनुकूलस्य संकल्पः[१] प्रतिकूल-विसर्जनम्[२]।।४।।
करिष्यतीति विश्वासो[३] भर्तृत्वे वरणं तथा[४] ।।
आत्मनैवेद्य[५]-कार्पण्ये[६] षड्विधा शरणागतिः।।५।।

।। इति श्रीमद्वल्लभाचार्यकृता पञ्चश्लोकी समाप्ता ।।

।। साधनप्रकरणम् ।।

::तत्त्वार्थदीपनिबन्धके द्वितीय सर्वनिर्णय प्रकरणके अन्तर्गत कारिका२१२तें ::

(पाषण्डमतन्के प्रचुर प्रचारवारे या कलियुगमें धर्ममार्गको परित्याग करिके छलतें अधर्ममें रचेपचे जनन्को बाहुल्य दीसत है. तासों ही स्वाध्याय आचार आदिमें हु वैध प्रकारकों एसे लोग अनुसरत नाहिं. धर्मके छहों अंगह्नदेश काल द्रव्य मन्त्र कर्म कर्ताह्नके अशुद्ध होय जायवेतें हु धर्म तो सिद्ध होवत नाहिं, तोहु पाषण्डमतके अनुसरणतें बचिकें भागवतमार्गसों श्रीकृष्णके भजनमें जो परायण रहेगो सो कलिदोषतें अभिभूत न होवेगो एसो निरूपणद्वारा उपक्रम)

अधुना तु कलौ सर्वे विरुद्धाचार-तत्पराः ।।
स्वाध्यायादिक्रियाहीनाः तथाचार-पराङ्मुखाः।।१।।
क्रियमाणं तथाचारं विधिहीनं प्रकुर्वते ।।
विक्षिप्तमनसो भ्रान्ता जिह्वोपस्थ-परायणाः।।२।।
व्रात्यप्रायाः स्वतो दुष्टास् तत्र धर्मः कथं भवेत् ।।
षड्भिः सम्पद्यते धर्मस् ते दुर्लभतराः कलौ।।३।।
अथापि धर्ममार्गेण स्थित्वा कृष्णं भजेत् सदा ।।

श्रीभागवतमार्गेण स कथञ्चित् तरिष्यति।।४।।

(वेदनिन्दा अथवा अधर्मके आचरणके कारण जो हीनयोनिमें जनमत हैं तेसें हू पूर्वसंस्कारवश भगवद्भजनमें जो प्रवृत्त होवें तो उद्धार होय सके परि सांसारिक अभिनिवेशतें तो जन्म-मरणके चक्रतें मुक्ति मिलत नाहिं. तसों वेदनिन्दा कबहु न करे तो भक्तिमार्ग फलदायक होत है)

अत्रापि वेदनिन्दायाम् अधर्मकरणात् तथा ।।
नरके न भवेत् पातः किन्तु हीनेषु जायते।।५।।
पूर्वसंस्कारतस् तत्र भजन् मुच्येत जन्मभिः ।।
अत्यन्ताभिनिवेशश् चेत् संसारे न भवेत् तदा।।६।।
एतावन्मात्रताप्यस्ति मार्गेऽस्मिन् मुरवैरिणः ।।

(अन्य सगरे साधनन्को अभिमान छांडिके, श्रीकृष्णमें अनन्य दास्यभावना राखिके, वहीं मनकों जोड़वेतें सायुज्य मिलत है. दारागारपुत्राप्तादिक सबहिन्कों श्रीकष्णकों समर्पित करिके अरु श्रीकृष्णके माहात्म्यकों भलीभांति समझिके प्रेमके सहित भजन करिवेवारे तो दुर्लभ होवत हैं)

सर्वत्यागे-ऽनन्यभावे कृष्णमात्रैक-मानसे।।७।।
सायुज्यं कृष्णदेवेन शीघ्रमेव ध्रुवं फलम् ।।
एतादृशस्तु पुरुषः कोटिष्वपि सुदुर्लभः।।८।।
यो दारागार-पुत्राप्तान् प्राणान् वित्तम् इमं परम् ।।
हित्वा कृष्णे परं-भावं-गतः प्रेमप्लुतः सदा।।९।।

(भक्तिमार्गमें प्रमेय[1] फल[2] साधन-अवान्तरसाधन[3] किंवा प्रमाण[4] सभी उत्कृष्ट हें तासों यह मार्ग सर्वोत्तम हे)

विशिष्टरूपं वेदार्थः[1] फलं[2] प्रेम च साधनम् ।।

श्रीकृष्ण फल हैं, प्रेम साधन है, प्रेमको जगानेका साधन नवधाभक्ति है.

तत्साधनं नवविधा भक्तिस्[3] तत्प्रतिपादिका।।१०।।
गीता सङ्क्षेपतस् तस्या वक्ता स्वयम् अभूद् हरिः ।।
तद्विस्तारो भागवतं सर्वनिर्णय–पूर्वकम्।।११।।
व्यासः समाधिना सर्वम् आह कृष्णोक्तम् आदितः[4] ।।
मार्गोऽयं सर्वमार्गाणाम् उत्तमः परिकीर्तितः।।१२।।
यस्मिन् पातभयं नास्ति मोचकः सर्वथा यतः ।।

(कलिदोषवशात् अन्य उपाय असाधक बने हें तोउ भक्तिमार्ग तो कलियुगमें हु ध्रुव फल प्रदान करिवेवारो हे)

वर्णाश्रमवतां धर्मे मुख्ये नष्टे छलेन तु ।।१३।।
क्रियमाणे न धर्मः स्याद् अतस् तस्मान् न मोचनम् ।।
बुद्धिमान् आदरं तस्मिन् छले साध्येऽपि दुःखतः।।१४।।
त्यक्त्वा मार्गे ध्रुवफले भक्तिमार्गे समाविशेत् ।।

(भक्तिमार्गको आचरण श्रुति–स्मृतिसों विरुद्ध नाहिं, तेसेइ प्रमेय हु वेदविरुद्ध नाहिं. यद्यपि मायावादीन्कों भक्तिमें निगूढ द्वेष होत हे तोउ खुद मायावाद ही अप्रामाणिक हे, भक्तिमार्ग कथमपि अप्रामाणिक नाहिं. सो काहेतें जो याके मूलमें तो भगवत्कृपा ही होत है. तासों भगवत्कृपाके भाजन जो जीव हें तिनको ही भक्तिमार्गमें फलमुख अधिकार होत हे, सब कोउको नाहिं. कृपाको परिज्ञान हु जिनकी भक्तिमार्गमें रुचि होय तासों होत हे. अन्य कोउ उपाय नाहिं)

विरुद्धकरणं नास्ति प्रक्रिया न विरुध्यते।।१५।।
कल्पितैर् एव बाधः स्याद् अवोचाम प्रमाणताम् ।।
सर्वथा चेद् हरिकृपा न भविष्यति यस्यहि।।१६।।

तस्य सर्वम् अशक्यं स्यान् मार्गे-ऽस्मिन् सुतरामपि ।।
कृपायुक्तस्य तु यथा सिध्येत् कारणम् उच्यते।।१७।।

(भक्तिमार्गीय साधनोमें सर्वप्रथम साधन हेः दम्भादि दोषन्सों रहित[२] श्रीकृष्णसेवापरायण[१] श्रीभागवततत्त्वज्ञ[४] पुरुष[३]में गुरुबुद्धि राखिके ताको अनुसरण करनो)

कृष्ण-सेवापरं[१] वीक्ष्य दम्भादि-रहितं[२] नरम्[३] ।।
श्रीभागवत-तत्त्वज्ञं[४] भजेज् जिज्ञासुर् आदरात्।।१८।।

(एसे गुरुके दुर्लभ होयवेपे अनुकल्पतया भगवत्सेवामें कोउ स्वतः हु प्रवृत्त होय सके. सो काहेतें जो श्रीकृष्णमूर्ति तो साक्षाद् भगवत्स्वरूप हे तहां कछु संशयकी बात नहिं. तासों ताके तीन[क,ख,ग] हेतु)

तदभावे स्वयं वापि मूर्तिं कृत्वा हरेः क्वचित् ।।
परिचर्यां सदा कुर्यात् तद्रूपं तत्र च स्थितम्[क] ।।१९।।
साकार-व्यापकत्वाच्च[ख] मन्त्रस्यापि विधानतः[ग] ।।

(श्रीकृष्णको ही तथा भक्तिमार्गके अनुसार ही यथोपलब्ध उपचारन्सों प्रेमपूर्वक पूजन करनो[१], तहां अनुकूल होय तो भार्यादिकन्के हु भगवत्सेवामें विनियोग करिवेकी अनुज्ञा[२], उदासीन होय तो तिनके विनियोगको निषेध[३] अरु प्रतिकूल होयवेपे तिनके परित्यागकी आज्ञा[४])

श्रीकृष्णं पूजयेद् भक्त्या यथालब्धोपचारकैः।।२०।।
यथा सुन्दरतां याति वस्त्रैर् आभरणैर् अपि ।।
अलंकुर्वीत सप्रेम तथा स्थान-पुरःसरम्[१] ।।२१।।
भार्यादिर् अनुकूलश् चेत् कारयेद् भगवत्-क्रियाम्[२] ।।

कृष्णसेवापर, दम्भादिरहित तथा भागवततत्त्वज्ञ पुरुषसे पुष्टिमार्गका मार्गदर्शन लें.

उदासीने स्वयं कुर्यात्[३] प्रतिकूले गृहं त्यजेत्।।२२।।
तत्–त्यागे दूषणं नास्ति यतो विष्णु–पराङ्–मुखाः[४] ।।

(भक्तिमार्गमें जे प्रवृत्त भये होंय तिनसों आजीविकावश अधिक भगवत्सेवा न बनि आवे तो एक याम सेवाके काज काढ़िके शेष कालमें आजीविकामें व्यापृत भये चित्तकों भगवान्में पुनः जोड़िवेको उपाय तो नियमपूर्वक, अधिकार होयवेपे, भागवतजीको पाठ ही है. सो काहेतें जो नियमपूर्वक पाठ हु श्रीकृष्णके आन्तर भजनको ही एक प्रकार है[१]. भजनकी या रीतिमें मनको अव्याकुल राखिवेके उपाय: सर्वत्र श्रीकृष्णकी भावन राखीके जो कछु परुष=कठोर बात कोउ कहे ताकों धीरज राखिके सहि लेनी, वैराग्य अरु सन्तोष क्यों हु करिके छांडने नाहिं[२])

सर्वथा वृत्तिहीनश् चेद् एकं यामं हरौ नयेत्।।२३।।
पठेच् च नियमं कृत्वा श्रीभागवतम् आदरात्[१] ।।
सर्वं सहेत परुषं सर्वेषां कृष्णभावनात्।।२४।।
वैराग्यं परितोषं च सर्वथा न परित्यजेत्[२] ।।
एतद्–देहावसाने तु कृतार्थः स्यान् न संशयः।।२५।।
इति निश्चित्य मनसा कृष्णं परिचरेत् सदा ।।

(भजन करिवेकी रीति[१–क–ख–ग–घ] भजनोपयोगिसामग्री[२] भजनकर्ता[३] तथा भजनके काल[४])

सर्वापेक्षां परित्यज्य[१–क] दृढं कृत्वा मनः स्थिरम्[१–ख] ।।२६।।
दृढविश्वासतो युक्त्या यथा सिध्येत् तथाऽऽचरेत्[१–ग] ।।
वृथालाप–क्रिया–ध्यानं सर्वथैव परित्यजेत[१–घ] ।।२७।।

यद् यद् इष्टतमं लोके यच्चातिप्रियम् आत्मनः ।।
येन स्यान् निर्वृतिश् चित्ते तत् कृष्णे साधयेद् ध्रुवम्[२] ।।२८।।
स्वयं परिचरेद् भक्त्या वस्त्रप्रक्षालनादिभिः[३] ।।
एककालं द्विकालं वा त्रिकालं वापि पूजयेत्[४] ।।२९।।

(शास्त्रविहित नित्यकर्मरूप धर्ममें प्रवृत्ति[१], निषिद्‌ध कर्मरूप अधर्मतें निवृत्ति[२]; अरु इन्द्रियन्को विनिग्रह[३] हु भगवद्भजनमें अंग बने हे. सो काहेते जो दुष्टसङ्ग, शक्य होयवेपे हु स्वधर्मको पालन न करनो, निषिद्ध कर्मन्में जानिबूझिके प्रवृत्त होनो; अरु इन्द्रियन्को अनिग्रह इतनी बात भक्तिमें हू बाधक होत है. तासों इनको त्याग आवश्यक है. भक्तिके विरोधी होंय तब तो स्वधर्माचरणादिके त्यागमें कछु दोष नाहिं[४]. तेसेइ परोपकारादि धर्मन्के त्यागमें हु कोउ दोष नाहिं[५])

स्वधर्माचरणं शक्त्या[१] विधर्माच्च निवर्तनम्[२] ।।
इन्द्रियाश्व-विनिग्राहः[३] सर्वथा न त्यजेत् त्रयम्।।३०।।
एतद्विरोधि यत् किञ्चित् तत्तु शीघ्रं परित्यजेत्[४] ।।
धर्मादीनां तथा चास्य तारतम्यं विचारयन्[५] ।।३१।।

(भक्तिमार्गमें पूजासाधनाकी अनुवृत्ति जेसे-जेसे बढ़त हे तेसे-तेसे भक्तके मनमें भगवदावेश सिद्ध होवत हे. ता करिके भक्तिके साधनन्में निष्ठा हु बढ़त हे[१]. यामे दैन्य आवश्यक हे अरु अहंकार भक्तिबाधक[२]. भक्तिसिद्ध्यर्थ भगवद्गुणगान तथा भगवन्नामोच्चारण निर्भय अरु निस्पृह होयके करने[३]. निर्हेतुक तथा दंभादिरहित ही भागवतजीको पाठ भगवान्में भावको जनक बनत हे[४])

यथा-यथा हरिः कृष्णो मनस्याविशते निजे ।।

अयोग्यको गुरु बनानेसे तो अच्छा है कि स्वयं ही कृष्णसेवा करने लग जाना.

तथा-तथा साधनेषु परिनिष्ठा विवर्धते[१]।।३२।।
कृष्णे सर्वात्मके नित्यं सर्वथा दीनभावना ।।
अहंकारं न कुर्वीत मानापेक्षां विवर्जयेत्[२]।।३३।।
सर्वथा तद्गुणालापं नामोच्चारणमेव वा ।।
सभायामपि कुर्वीत निर्भयो निःस्पृहस्ततः[३]।।३४।।
साधनं परम् एतद्धि श्रीभागवतम् आदरात् ।।
पठनीयं प्रयत्नेन निर्हेतुकम् अदम्भतः[४]।।३५।।

(भक्तिमार्गमें भगवत्पूजाङ्गभूत शंखचक्रादि मुद्रा धारण करनी[१], तुलसीकाष्ठकी माला तथा ऊर्ध्वपुण्ड्र[२] आदि वैष्णवचिह्ननन्को धारण करने)

शंख-चक्रादिकं धार्यं मृदा पूजाङ्गमेव तत्[१] ।।
तुलसी-काष्ठजा माला तिलकं लिङ्गमेव तत्[२]।।३६।।

(दशमीके वेधसों वर्जित एकादशीको उपवास[१], तेसेइ सप्तमीके वेधसों वर्जित जन्माष्टमीव्रत[२], तेसेइ रामनवमी, नृसिंहचतुर्दशी, वामनद्वादशी जयन्तिके हु उत्सव अरु उपवास करने ही)

एकादश्युपवासादि कर्तव्यं वेध-वर्जितम् ।।
तथा कृष्णाष्टमी चापि सप्तमी-वेध-वर्जिता।।३७।।
अन्यान्यपि तथा कुर्याद् उत्सवो यत्र वै हरेः ।।

(गृहस्थके काज ये सगरे कर्तव्य मुख्य हें[१]. ब्रह्मचारी प्रभृतीन्के पास हु सेवक-साधन-सम्पत्ति होय तो एसे ही करनो अन्यथा न करनो[२]. संन्यासीन्के काज तो निरन्तर पर्यटन ही मुख्य कल्प हे, भगवत्सेवा नाहिं[३])

एतत् सर्वं प्रयत्नेन गृहस्थस्य प्रकीर्तितम्[१]।।३८।।

अन्येषां सम्भवेत्तु स्याद्[२] यतेः पर्यटनं वरम्[३]।।

(गृहस्थोन्कों हु मानसिक[१] शारीरिक[२] पारिवारिक[३] आहंकारिक[४] मामकारिक[५] दोषन्की सम्भावना होयवेपे पूजाके नियमको परित्याग करिके तीर्थपर्यटन अथवा पूजानुकूलदेशमें दोषरहित स्थितिको विकल्प)

विक्षेपाद्[१] अथवाशक्त्या[२] प्रतिबन्धाद्[३] अपि क्वचित्।।३९।।
अत्याग्रह-प्रवेशे[४] वा परपीडा[५]दि-सम्भवे ।।
तीर्थपर्यटनं श्रेष्ठं सर्वेषां वर्णिनां तथा ।।४०।।

(यज्ञ अरु तीर्थ मेंते जो बनि आवे सो करनो परि वर्णाश्रमीन्कों हु वर्णाश्रमधर्मके साथ तीर्थाटन हु विकल्पतया[१] प्राप्त होयवेसूं निरन्तर तीर्थाटनके नियम[२] अरु तीर्थयात्राके उत्तमोत्तम होयवेको निरूपण)

यज्ञास् तीर्थानि च पुनः समानि हरिणा कृताः[१] ।।
अतस् तेष्वप्रतिग्राही तद्दिनान् नाधिकस्य हि।।४१।।
हतत्रपः पठेन् नित्यं नामानि च कृतानि च ।।
एकाकी निस्पृहः शान्तः पर्यटेत् कृष्णतत्परः।।४२।।
देह-पातन-पर्यन्तम् अव्यग्रात्मा सदागतिः[२] ।।
उत्तमोत्तमम् एतद्धि पूर्वम् उत्तमम् ईरितम्।।४३।।

(दृढ बीजभाववारे भक्तकों भगवद्विरहानुभवार्थ घर-धन आदिके त्यागकी अनुज्ञा=छूट[क], अदृढ बीजभाववारेकों गृह-धन आदिको संग्रह भगवत्सेवार्थ करिवेकी आज्ञा[ख])

गृहं सर्वात्मना त्याज्यं[क] तच्चेत् त्यक्तुं न शक्यते ।।
कृष्णार्थं तन् नियुञ्जीत[ख] कृष्णः संसारमोचकः।।४४।।

धनं सर्वात्मना त्याज्यं[क] तच्चेत् त्यक्तुं न शक्यते ।।
कृष्णार्थं तत् प्रयुञ्जीत[ख] कृष्णो-ऽनर्थस्य वारकः।।४५।।

(पूर्वोक्त दोनों कल्पन्मेंतें एक हू कल्पकों अनुसरिवेकी सामर्थ्य न होय तो तीसरो अनुकल्प सर्वविध हेतुन्तें विवर्जित भागवतको पाठ करिवो हे[१]. प्राणसंकट होय तोहु आजीविकाके हेतु द्रव्यादिकी दक्षिणा लेवेकुं भागवतकथा न करनी[२]. इन तीनोमेंसूं काहु एक मारगकों अनुसरिवेतें श्रीकृष्णसायुज्य तो मिलत ही हे[३])

अथवा सर्वदा शास्त्रं श्रीभागवतम् आदरात् ।।
पठनीयं प्रयत्नेन सर्व-हेतु-विवर्जितम्[क] ।।४६।।
वृत्त्यर्थं नैव युञ्जीत प्राणैः कण्ठगतैर् अपि[ख] ।।
तदभावे यथैव स्यात् तथा निर्वाहम् आचरेत् ।।४७।।
त्रयाणां येन केनापि भजन् कृष्णम् अवाप्नुयात्[ग] ।।

(भागवतपाठकी हु सामर्थ्य न होय तो चतुर्थ अनुकल्प जगदीश पंढरपुर श्रीरंगम् तिरुपतिबालाजी जेसे विष्णुक्षेत्रमें रहिके प्रपत्तिमार्गको अनुसरण करि भगवत्पूजन करनो)

जगन्नाथे विट्ठले च श्रीरंगे वेंकटे तथा ।।४८।।
यत्र पूजा-प्रवाहः स्यात् तत्र तिष्ठेत तत्परः ।।

(भागवतोक्त भक्तिमार्गीय अरु प्रपत्तिमार्गीय फल-साधनके निर्धारको उपसंहार)

एतन् मार्गद्वयं प्रोक्तं गति-साधन-संयुतम्।।४९।।

।।इति श्रीमद्वल्लभाचार्यविरचिते श्रीभागवततत्वदीपे
सर्वनिर्णयान्तर्गते साधनप्रकरणं सम्पूर्णम्।।

प्रभुसेवार्थ मांगे हुवे द्रव्यसे की जाती सेवाको प्रभु बिलकुल स्वीकारते नहीं हैं.

।। शिक्षापद्यानि ।।

(आचार्यचरन्‌ने जो कछु उपदेश दिये तिन सभी उपदेशन्‌को सारभूत निष्कर्ष: पुष्टिमार्गमें बहिर्मुखता=भगवद्‌विमुखता सबते बड़ो दोष है. जो पुष्टिजीव भगवदभिमुख होत हें तिनकों फलादि प्रदान करिवेमें कालादिकन्‌की नियामकता नाहिं किन्तु भगवद्विमुख पुष्टिजीवन्‌के काज काल–कर्म–स्वभावादि बाधक बनत हें)

यदा बहिर्मुखा यूयं भविष्यथ कथञ्चन ।।
तदा काल–प्रवाहस्था देह–चित्तादयो–ऽप्युत ।।१।।
सर्वथा भक्षयिष्यन्ति युष्मान् इति मतिर् मम ।।

(पुष्टिमार्गमें लोकार्थितया कोउ भगवद्‌भक्ति किंवा भगवत्प्रपत्ति करे तो वे दोउ बहिर्मुखतातें बचि सकत नाहिं)

न लौकिकः प्रभुः कृष्णो मनुते नैव लौकिकम्।।२।।

(पुष्टिमार्गीय जीवन्‌के काज तो या लोकमें किंवा परलोकमें श्रीव्रजाधिप पुष्टिप्रभु ही सर्वस्व करि जानिये)

भावस् तत्राप्यस्मदीयः सर्वस्वश्चैहिकश्च सः ।।
परलोकश्च... ... ... ।।

(तासों पुष्टिमार्गीय जीवकों श्रीकृष्णार्थी ह्वैके ही सर्वभावसों श्रीकृष्णकी सेवा करनी)

... ... तेनायं सर्वभावेन सर्वथा ।।३।।
सेव्यः... ... ... ।।

(जामें पुष्टिजीवको हित सिद्ध होय सो ही भगवान् करत हें एसो विश्वास भगवान् श्रीगोपीजनवल्लभमें स्थापित करनो, काल–कर्म–स्वभावादिककी सामर्थ्यमें नाहिं)

... सएव गोपीशो विधास्यत्यखिलं हि नः ।।

।। इति श्रीवल्लभाचार्य विरचितानि शिक्षापद्यानि समाप्तानि ।।

।। साधनदीपिका ।।

(मङ्गलाचरण)

ता नः श्रीतात–पत्–पद्म–रेणवः कामधेनवः ।।
नाकस्य तरवो–ऽन्येषां स्युः कल्पतरवो यथा।।१।।
श्रुति–स्मृति–शिरोरत्नह्वनीराजित–पदाम्बुजम् ।।
यशोदोत्सङ्ग–ललितं वन्दे श्रीनन्दनन्दनम्।।२।।

(या ग्रन्थमें उपदिष्ट बातन्में प्रमाण श्रुति स्मृति सूत्र पुराण तन्त्र आदि शास्त्रन्की श्रीमदाचार्यचरणद्वारा प्रकट करि व्याख्याहे)

भक्तिमार्ग–वितानाय यो–ऽवतीर्णो हुताशनः ।।
सएव नः परं मानं शेषम् अस्य प्रमान्तरम्।।३।।
वेदत्रयी–शिरोभाग–सूत्र–व्याख्यान–सम्मताम् ।।
भक्ति–शास्त्रानुसारेण कुर्वे साधन–दीपिकाम्।।४।।

(श्रीहरिभजनकी आवश्यकताके उपपादनके साथ ग्रन्थोको उपक्रम)

‘आत्मा वार’ इति श्रुत्या दर्शनैक–फलो विधिः ।।
श्रवणाद्यैः प्रतिज्ञातः ‘तं भजेत्’–‘तं रसेद्’ इति।।५।।
‘‘तस्माद् भारत सर्वात्मा भगवान् हरिरीश्वरः ।।
श्रोतव्यः कीर्तितव्यश्च स्मर्तव्यश्चेच्छताभयम्’’।।६।।
पुरुषस्याविशेषेण संसारं प्रजिहासतः ।।
हरेर् आराधने मुक्तिः ... ... ।।

(तहां क्यों[१] अरु कैसे[२] गुरुकी आवश्यकता होत है ताको निरूपण)

... ... तत्प्रकारो निरूप्यते।।७।।

‘‘माहात्म्य–ज्ञान–पूर्वो हि सुदृढः सर्वतो–ऽधिकः ।।
स्नेहो ‘भक्ति’रिति प्रोक्तः तया मुक्तिर् न चान्यथा’’।।८।
माहात्म्य–ज्ञापनायैव श्रवणं गुण–कर्मणाम् ।।
शास्त्राणाम् उपयोगो–ऽत्र तत्राकांक्षा–[1]गुरोर् भवेत्।।९।।
‘‘कृष्ण–सेवा–परं वीक्ष्य दम्भादिरहितं नरम् ।।
श्रीभागवत–तत्त्वज्ञं भजेद् जिज्ञासुरादरात्’’[2]।।१०।।

(स्वमार्गीय गुरुको प्रथम कर्तव्यः भगवत्प्रपत्तिके काज दैवि जीवन्कों प्रेरित करनो)

देहद्रोण्या यियासूनां परं पारं भवाम्बुधेः ।।
गुरुणा कर्णधारेण *[1]ह्युत्तार्या स्वोपदेशतः।।११।।
‘‘यो ब्रह्माणं विदधाति पूर्वं
यो वै वेदांश्च प्रहिणोति तस्मै ।।
तं ह देवम् आत्म–बुद्धि–प्रकाशं
मुमुक्षुर् वै शरणम् अहं प्रपद्ये’’।।१२।।
‘‘सर्व–धर्मान् परित्यज्य माम् एकं शरणं व्रज’’ ।।
इति श्रुत्या तथा स्मृत्या प्रपत्त्यादेशम् आदितः।।१३।।

(स्वमार्गीय द्विजकुलके शिष्यन्को कर्तव्य)

प्रेम्णोपदेश–श्रवणात् *[2]प्रपत्तिः प्रेमकारणम् ।।
अतो मूलाभिषेको हि कार्यस् तेनास्य सेवने।।१४।।
नहि देहभृता शक्यं कर्म त्यक्तुम् अशेषतः ।।
अतः स्वधर्माचरणं भारद्वैगुण्यम् अन्यथा।।१५।।

स्वधर्माचरणं शक्त्या ह्यधर्मात्तु निवर्तनम् ।।
इन्द्रियाऽश्व-विनिग्राहः सर्वथा न त्यजेत् त्रयम्।।१६।।
इति भागवतो धर्मः श्रीमदाचार्य-सम्मतः ।।
भक्ति-शास्त्रानुकूल्येन स्वधर्माचरणं भवेत्।।१७।।

(तहां निजशाखानुसार षोडशसंस्कार तथा तन्मूलक आह्निक शौचाचार[१-६] आदि भक्त्युपयोगी होयवेतें द्विजशरीरधारिके काज आवश्यक हैं)

गर्भाधानादि-संस्कारैर् द्विजैर् मौञ्ज्यन्त-सम्भवैः ।।
देहः संशोधनीयो हि हरिभावो न चान्यथा।।१८।।
शौचाचार-विहीनस्य आसुरावेश-सम्भवात् ।।
ततः स्वाह्निक-धर्माणाम् आचारोऽपि प्रसज्यते।।१९।।
स्नानं[१] सन्ध्याजपो[२] होमः[३] स्वाध्यायः[४] पितृतर्पणम्[५] ।।
वैश्वदेवक-देवार्चा[६] इति षट्-कर्मकृद् भवेत्।।२०।।
यथा हि स्कन्ध-शाखानां तरोर् मूलाभिषेचनम् ।।
तथा सर्वार्हणं यस्मात् परिचर्या-विधिर् हरेः।।२१।।
अतस् तदनुरोधेन नित्य-कर्म-कृतिर् वरा ।।
अन्यथा तु कृतिर् व्यर्था त्रैवर्ग्य-विषया यतः।।२२।।
गर्भाधानादि-संस्कारैः स्वशाखोक्तैर् द्विजो युतः ।।
गुरुं प्रपद्येद्... ... ... ।।

(द्विजेतर शिष्यन्के कर्तव्यको निरूपण)

... ... अन्यस्तु सदाचारो-ऽस्य संश्रयात्।।२३।।

(प्रपत्तिमार्गमें दीक्षितन्कों[क] वैष्णवाचारको[ख] निभानो तासों सप्तविध भक्ति[ग/१-७] वैष्णवव्रतोत्सव[घ] पञ्चयज्ञ[ङ] तीर्थवास[च] वैष्णव-तिलकादि बाह्य[छ] अरु आभ्यन्तर चिह्ननन्को[ज] धारण करनो आदि उपदेश)

[*३]लब्ध्वानुग्रहम् आचार्यात् श्रीकृष्ण–शरणं जनः[क] ।।
धारयेत् तिलकं मालां वैष्णवाचार–तत्परः।।२४।।
सर्वस्वं हरिसात् कार्यं त्यजेत् सर्वम् अवैष्णवम् ।।
हिंस्र–काम्यान्यदेवार्चा यदि नित्यं च लौकिकम्।।२५।।
पूर्व–भाण्डादिकं सर्वं परित्यज्य विशुद्धितः[ख] ।।
श्रवणादि[ग/१-७]परो नित्यं हरेः प्रेमास्पदो भवेत्।।२६।।
हरेर् गुणानां श्रवणं ज्यायोभ्यः शृणुयात् सदा[ग/१]।।
जात–शिक्षः यवीयोभ्यः कीर्तयेद् अन्यथैकलः[ग/२]।।२७।।
अति–सुन्दर–रूपाणि लीला–धामानि संस्मरेत्[ग/३]।।
पादसेवा हरेः कार्या सर्वसम्पन्निकेतनैः[ग/४]।।२८।।
अर्चनं प्रत्यहं तस्य विधिना नियमेन च[ग/५]।।
वन्दनं चरणाम्भोजे तस्य भावनयाखिले[ग/६]।।२९।।
दास्यं तदेक–शरणं तत्प्रसादैक–भोजनम्[ग/७] ।।
एवं सप्तविधा भक्तिः प्रपन्नाधिकृता भवेत्।।३०।।
पूर्व–विद्धं परित्याज्यं व्रतं तद्विष्णु–पञ्चकम् ।।
[*४]जयन्ती तूदये–ऽन्येन दुष्टान्याप्यरुणोदयात् ।।३१।।
वर्षाश्रितान्युत्सवानि स्वाश्रितान्यपि यान्युत[घ] ।।

तानि सर्वाणि हरये [*]ऽह्यनुकूलानि चार्पयेत् ।।३२।।
श्राद्धानि चोत्तमान्येव वैश्वदेवं च दैवकम् ।।
हरेः प्रसादतः कुर्यात् ततस् तृप्तिर् अनुत्तमा ।।३३।।
प्रसादोऽपि बलिः कार्यः स्वात्म–संस्कारएव सः ।।
अन्नस्य चात्मनश्चापि तत्संस्कारेण तत्परः।।३४।।
विप्रा गावो हरेर् भक्ताः सदा पूज्या हरेः प्रियाः ।।
गृहस्थस्यातिथिर् यस्मात् पूज्यो दीनो दयास्पदः[ङ] ।।३५।।
जगन्नाथे द्वारिकायां श्रीरंगे व्रज–मण्डले ।।
यत्र पूजाप्रवाहः स्यात् तत्र तिष्ठेच्च तत्परः।।३६।।
गंगादि–तीर्थ–वर्येषु यथा चित्तं न दुष्यति[च] ।।
श्रवणाद्यैः भजेद् एवं श्रीभागवत–तत्परः।।३७।।
ऊर्ध्वपुण्ड्राणि मृन्मुद्राः तुलसी–काष्ठजापि स्रक्[छ] ।।
बाह्यांकान्यान्तराणि स्युः भक्ते शान्तिविरक्तयः।।३८।।
शमो दमस्तपः शौचं क्षान्तिर् आर्जवमेव च ।।
दया दानं च विज्ञानं श्रद्धा दैवात्म–सम्पदः।।३९।।
दैवात्म–सम्पदः पुंसः भक्तिर् भवति नैष्ठिकी[ज] ।।

(इन गुणन्के कारण भक्ति जब सर्वात्मभावापन्न[१] होवे तब या लोकमें प्रपञ्चविस्मृतिपूर्वक भगवदासक्ति[२] अरु वैकुण्ठादि भगवल्लोकमें सेवोपयोगिदेहकी प्राप्ति[३] हु फलित होवत हे)

यया ‘सर्वात्मभावा[क]’ख्या परासिद्धिः स्वयं भवेत्।।४०।।

जिस इन्द्रियका भगवद्विनियोग दिखलाई न देता हो उसका निग्रह करो.

सर्ववस्तुषु वैराग्यं दोष–दृष्ट्या विभावयेत्[१] ।।
दमनाद् इन्द्रियाणां च सन्तुष्ट्यापि च सिध्यति।।४१।।
सर्वत्रैव विरक्तस्य रागः स्याद् नन्द–नन्दने ।।
तेनासक्तिश्च व्यसनं प्रपञ्चास्फुरणं भवेत्[२]।।४२।।
एवं निरुद्ध–चित्तस्याह्यनुगृहीतस्य चेशितुः ।।
लीलाप्रवेशोऽपीष्टश्च ‘तस्मान् मच्छरणो’क्तितः[३]।।४३।।

(एसे तादृशी वैष्णवन्की या भूतलपे स्थिति अन्य जीवन्के जैसी काल–कर्म–स्वभावाधीन नाहीं होत हे)

न पापं स करोत्येव प्रमादे त्वाशु निष्कृतिः ।।
अज्ञात–स्खलितानां च हरिरेव परा गतिः।।४४।।
हरिर् *[६]भक्तापराधेषु दययैव प्रसीदति ।।
दोषेषु न गतिस् तस्माद् दोषान् सम्परि–वर्जयेत् ।।४५।।
अशून्या दिवसा यामाः मुहूर्त–घटिका–लवाः ।।
भगवद्भजनैः कार्याः संसारासक्तिर् अन्यथा ।।४६।।

(जेसे श्रीहरिको भजन, तेसेइ श्रीहरिकी भावना राखीके गुरु अरु वैष्णव भक्तन्के प्रति हु नमन–अर्चन तथा दैन्य निभावने)

गुरु–सेवा गुरोराज्ञा गुरौ श्रीहरि–भावना ।।
गुरौ भयं गुरौ सिद्धिः प्रपन्नः परिभावयेत्।।४७।।
भक्तवृन्दान् नमेद् अर्चेद् दृष्ट्वा *[७]हृष्येत्(/हर्षं) समानयेत्।।
भक्तेष्वेवं हरिं साक्षात् प्रसादेन व्यवस्थितम्।।४८।।
विना भक्त–प्रसङ्गेन सद्गुरोः कृपया विना ।।

श्रीभागवत–शास्त्रेण विना भक्तिः कथं भवेत्।।४९।।
विना गद्‌गद–कण्ठेन द्रवता चेतसा विना ।।
विना नृत्येन गानेन हरिप्रीतिः कथं भवेत्?।।५०।।
‘‘दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया ।।
मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते’’।।५१।।

(सृष्टिके कर्ता केवल भगवान् हें, तासों ये सृष्टि भगवदात्मिका हे[१], सो या सृष्टिमें पुष्टिजीव भजनानन्दानुभवके प्रदानार्थ ही प्रकट भये हैं[२] तासों पुष्टिजीवन्कों भगवदनुग्रहार्थ नियोजित करनो हु भगवत्सेवा ही हे[३])

क्रीडार्थम् असृजत् पूर्वं स्वात्मना स्वात्मकं जगत्[१] ।।
तत्र कायभवा पुष्टिः लीलासृष्टिर् अनुत्तमा ।।५२।।
वामांश–सम्भवानान्तु भजनानन्द–लब्धये ।।
विसृष्टानां ततोऽन्येषां नान्या साधन–पद्धतिः।।५३।।
‘‘यस्यायम् अनुगृह्णाति भगवान् आत्म–भावितः।।
स जहाति मतिं लोके वेदे च परिनिष्ठिताम्’’[२]।।५४।।
*[८]अनुग्रहे नियोज्यो–ऽतः संग्रहः श्रुति–सम्मतः ।।
महतां समयो मानं महान्तो–ऽत्र हरेः प्रियाः[३] ।।५५।।

(श्रीमद्भागवतके ‘‘रतिरासो …’’ (३।७।१८) श्लोकमें निरूपित भजनानन्दकी उपलब्धिके काज आत्मसमर्पणादि साधनन्‌को निरूपण)

अतस् तदनुरोधेन ‘रतिरासो’ यथा भवेत् ।।
तदर्थं वरणं कार्यं श्रीगोपाल–महामनोः।।५६।।
नायमात्मा प्रवचनैर् न धिया न बहुश्रुतैः ।।

सेवाके अनवसरमें वृन्दावनमें होती भगवल्लीलाकी भावना करनी चाहिये.

लभ्यते वरणं हित्वा वृतं संवृणुते श्रुतेः।।५७।।
स्मृत्वा स्वीय–वियोगाग्निं तापदाहो भवाम्बुधौ ।।
ततः सर्वं समर्प्यैव श्रीगोपालमनुं श्रयेत्।।५८।।
‘‘इष्टं दत्तं तपो जप्तं वृतं यच्चात्मनः प्रियम् ।।
दारान् सुतान् गृहान् प्राणान् यत् परस्मै निवेदनम्’’।।५९।।
‘‘इति भागवतान् धर्मान् शिक्षन् भक्त्या तदुत्थया ।।
नारायणपरो मायाम् अञ्जस्तरति दुस्तराम्’’।।६०।।
एवं योगीश्वरोक्तेन भक्तिमार्गेण यो यजेत् ।।
सएवातीत्य कलिजान् दोषान् गच्छेत् परं पदम्।।६१।।

(तहां भक्तिमार्गमें निषिद्ध एसी कछूक बातन्को निरूपण)

नावैष्णवैः सह वसेन् न तैः संसर्गम् आचरेत् ।।
प्रसङ्गेषु हरिं ध्यायेत् स्नायात् कर्मणि मन्त्रतः।।६२।।
देहशुद्धिः सदा कार्या करशुद्धिर् विशेषतः ।।
स्वपात्रं भगवत्पात्रं स्नानपात्रं न मेलयेत्।।६३।।
एवं वस्त्रेऽपि विज्ञेये [*९]शुद्ध्यशुद्धी स्ववैष्णवैः ।।
गोपयेत् स्वागमाचारं पाकसेवां हरेरपि ।।६४।।

(भगवत्सेवोपयोगी शुद्ध वस्तुन्को उपदेश)

सौवर्णैः राजतैस् ताम्रैः पात्रैर् व्यवहरेत् परैः ।।
पाके स्वीयान् सतीर्थ्यांश्च सवर्णान् संनियोजयेत्।।६५।।
समर्प्यैव शुचिः पूर्वं हरये–ऽन्यत्र योजयेत् ।।
[*१०]द्विमुखं शुचि पात्रं तु ह्यंशुकं लोमजं शुचिः।।६६।।

सेवा करनेमें असमर्थको प्रभुकी मथुरागमन लीलाकी भावना करनी चाहिये.

कार्पासम् आहतं शुद्धं नव–कौसुम्भयुक् शुचि ।।
विप्रैर् व्यवहृतं तीर्थम् आरामं च गृहं शुचि।।६७।।

(भगवत्सेवापरायण होंय तिनकों अन्यदेवको आश्रय सर्वथा निषिद्ध होयवेपे हु अन्यदेवन्‌को अपमान कबहु न करनो. तासों कहा–केसे करनो ताको प्रकार)

नान्यदेवं व्रजेद् नैव [*११]प्रसक्तौ ह्यपमानयेत् ।।
तीर्थेषु तीर्थदेवानां भूदेवानां समर्चनम्।।६८।।

(कलिकालमें संन्यास अग्निहोत्रादि तो शक्य न होयवेतें स्मार्ताग्निको धारण करनो)

संन्यासश् चाग्निहोत्रं च कलौ नैव यथाविधि ।।
सन्दिग्ध–धर्मसेवापि क्लेशायैवाल्पमेधसाम्।।६९।।
समर्थस्तु तयोः कुर्याद् विद्वान् स्मार्ताग्नि–धारणम् ।।
न्यासाश्रमात् पतन् मर्त्य आरूढ–पतितोऽगतिः।।७०।।
यद्यप्येवं हि गार्हस्थ्यं वर्णधर्मेण दुष्करम् ।।
तथाप्यायात–पतितं तद् [*१२]बिभृयाद् देहयात्रया।।७१।।
न गार्हस्थ्यं विना देह–यात्रा–धर्मोऽपि सिध्यति ।।
अतस्तस्मिन् स्थितस्यैव यत्किंचित् सिद्धिसम्भवः।।७२।।
आश्रमो द्विविधः कौर्मे तत्रोदासीनको गृही ।।
[*१३]आद्येऽपि नैष्ठिकश्चान्त्ये वैष्णवोऽधिकृतस्ततः।।७३।।

(द्विजेतर पुष्टिमार्गीयन्‌के कर्तव्यको निर्देश)

शूद्रस्तु हिंस्रकार्येण निषिद्धस्याशनेन च ।।

निवृत्यासौ भजेत् कृष्णं महद्भिर् अनुकम्पितः।।७४।।
स हितं हरिभक्तानां ब्राह्मणानां चरेद् गवाम् ।।
पादसेवा च महतां यद्वृत्या तुष्यते हरिः।।७५।।
दानं व्रतं पैतृकं च शौचं शान्तिम् अथाश्रयेत् ।।
हरिमेव भजेत् प्रेम्णा तेन सिध्यति सत्वरम्।।७६।।
न वेदश्रवणं कार्यं स्पर्धासूयादिनान्यतः ।।
न्यग्भावेन प्रपन्नो-ऽसौ भवेद् दासो हरेर्गुरोः।।७७।।

(स्त्रियन्के भगवद्भजनकी रीतिको निरूपण)

सधवा भर्तृ-भावेन विधवा पुत्र-भावतः ।।
श्रीकृष्णं संश्रयेत् साध्वी जित-चित्तेन्द्रिया शुचिः।।७८।।
पति-पुत्रादि-बन्धूनाम् आनुकूल्येऽस्य सेवनम् ।।
तदभावे भजेद् भक्त्या कीर्तनैः श्रवणैः [*१४]स्मृतैः।।७९।।
तेषामेव तथात्वेतु परिचर्या समन्दिरात् ।।
हरेर् गुरोः सम्भवति ह्यस्वतन्त्राः स्त्रियो यतः।।८०।।
स्वतन्त्रतायां दोषो हि स्त्रीणां सर्वत्र जायते ।।
अतस् तया तथा भूत्वा हरिः सेव्यस् तदिच्छया।।८१।।
चित्रमात्रेऽपि सेवा स्यात् प्रतिबन्धे गुरोर्गिरा ।।
छलेनापि भजन् कृष्णं मुच्यते गोपिकादिवत्।।८२।।
पुरुषापेक्षया स्त्रीणां हृदयं मृदु दृश्यते ।।
अतस् तदनुरागोऽत्र सद्य एवाभिषज्यते।।८३।।

कामदोषो हि नारीणां कनकानां यथा रजः ।।
तज्जये विजितः कृष्णः कृष्णः स्त्रीणां प्रियोयतः।।८४।।
उदकी च प्रसूता स्त्री अशुचिश्च तथा पुमान् ।।
दर्शन–स्पर्शनादीनि सेव्यमूर्तेर् विवर्जयेत्।।८५।।

(सेव्य भगवत्स्वरूपके प्रकार[१], सेवाको प्रकार[२], स्वरूपप्रतिष्ठाको प्रकार[३], स्वरूपकी शुद्धिको प्रकार[४]; तथा भगवत्स्वरूप कहांते प्राप्त करने ताको प्रकार[५] इत्यादि उपदेश)

चित्रमूर्तिर् अविज्ञानां पराधीनात्मनामपि ।।
शुचिश्लक्ष्णाम् अपीच्यां च गुरुदत्तां भजेद् वरैः।।८६।।
तीर्थतोयैर्–निजैर्–मन्त्रैः संस्कृतां सुमनोहराम् ।।
लघ्वीमेव भजेद् मूर्तिं[१] यथालब्धोपचारकैः[२]।।८७।।
नात्र प्राण–प्रतिष्ठादि व्यापकत्वाद् अजीवतः ।।
स्थान–शुद्ध्यर्थम् एवैतत् शब्दार्थमपि सद्गुरोः[३]।।८८।।
अशुचि–स्पर्शने तस्याः तथा पञ्चामृतैरपि ।।
होमैर्–दानेन संशोध्या वैदिकेन निजात्मवत्[४]।।८९।।
गुरुदत्तां स्वयं लब्धां भक्तैरपि सुपूजिताम् ।।
व्यङ्गाङ्गीमपि सेवेत यदि भावो न बाध्यते[५]।।९०।।

(नित्यसेवाके स्वरूपके उपदेशको उपक्रम)

प्रातर् आरभ्य मध्याह्नावधिः चैवापराह्णके।।
तत्तल्लीलानुभावेन भजेत् स्व–गुरु–सम्मताम्।।९१।।
वस्त्रैश्च भूषणैर् गन्धैः नैवेद्यैर् व्यञ्जनैः शुभैः ।।

सांसारिक जंजालमें फंसे हुवे देहेन्द्रियमें हरिका आवेश होना संभव नहीं.

देश–काल–विभूतीनाम् अनुसारेण सेवनम्।।९२।।
प्रेम्णा परिचरेत् साधुः यावज्जीवं समाहितः ।।
तेनास्य भावना–सिद्धिः यया स्यात् कृतकृत्यता।।९३।।

(प्रात:कालमें जागरणके बाद[1] भगवत्स्मरण[2] शौच[3] आचमनादि[4] स्नान[5] आदिके नियम)

प्रातः पाश्चात्य–यामे–ऽसौ समुत्थाय[1] शुचिर् धिया ।।
स्मरेद् भगवतो लीलां गायेत् तस्य गुणान् गिरा[2] ।।९४।।
प्रातः कृत्यं ततः कार्यं बहिर् गत्वा यथोदितम्[3] ।।
मुखशुद्धिस् ततो नित्यं सौगन्धाभ्यञ्जनं भवेत्[4] ।।९५।।
मल–स्नानं गृहे कार्यं तप्तोदक–परोदकैः ।।
तस्योपरि श्रीयमुनाजलैः स्नानं स्तवैश्च वा ।।९६।।
तीर्थ–स्थाने मल–स्नानं कृत्वा तीरे–ऽभिमज्जनम्[5] ।।

(स्नानके पीछे वस्त्रधारण करिवेकी[1], घरकों लोटवेकी[2], तिलक–छापा धाराण करवेकी[3], चरणामृत लेवेकी[4], तुलसीमाला धारण करिवेकी[5], प्रात:सन्ध्या–जप करिवेकी[6] रीति)

ततस्तु धारणं शुद्धह्नकौशेयाम्बर–युग्मयोः[1]।।९७।।
पादुकाभिर् गृहे यानं स्पर्शनं नैव कस्यचित्[2] ।।
कुंकुमस्योर्ध्वपुण्ड्राणि द्वादशाङ्गेषु नामभिः।।९८।।
शंख–चक्रादि–मुद्राश्च गोपी–चन्दन–मृत्स्नया[3] ।।
चरणामृत–पानं च लेपश्चापि विशुद्धये[4]।।९९।।
ततस्तु तुलसी–मालां धृत्वा सन्ध्यां समाचरेत्[5] ।।

(ता पाछें अपने परिवारजनन्कों संग लेयके[१] सेव्यप्रभुके मन्दिरमें प्रवेश[२], मन्दिरकी भूमिको मार्जन[३], सेवोपयोगी पात्रन्को लेपन-प्रक्षालन[४], मंगलभोगकी तैयारी करिके[५] प्रभुकों जगायके सिंहासनपे पधरावने[६])

परिचर्या हरेः कार्या परिवारजनैः सह[१]।।१००।।
गत्वा हरिपदं पद्भ्यां स्तुत्वा द्वारं प्रणम्य च ।।
प्रविश्य मार्जनैर्[२] लेपैः पात्राणां शोधनं चरेत्[३]।।१०१।।
सम्भृत्य सर्व-सम्भारं प्रातराशादि-पूर्वकम्[४] ।।
प्रबोध्य श्रीहरिं प्रेम्णा मुखशुध्यंशुकादिभिः[५]।।१०२।।
अलंकृत्य ततः सिंहासने समुपवेशयेत्[६] ।।

(ता पाछें भोग सरायके मंगलाके पद गाने और मंगलाकी आरती करनी[१], प्रभुन्कों स्नान-अंगवस्त्र करावने[२], शृंगार धराने[३], बीडा धरने[४], आरसी दिखानी और ऋतु-काल अनुसार सजावट करनी[५]. ता पाछें गायन-वादन सहित धूप-दीप-आरती करती बखत निजजन यदि भक्त होंय तो विनकों दर्शन कराने होंय तो करावने[६])

हैयङ्गवीन-पक्वान्नैः ताम्बूलैः सुजलैर् यजेत्[१]।।१०३।।
ततो नीराजनं कार्यं मङ्गलं गीत-वाद्यकैः[२] ।।
[*१५]अभ्यङ्गोन्मर्दनैः स्नानं गृहस्नान-विधानतः।।१०४।।
स्तुत्वा [*१६]कलिन्दजां स्नाते कुर्यात् सम्प्रोञ्छनांशुकम्[३] ।।
शृङ्गारं रञ्जितैर् वस्त्रैः चित्रैर् आभरणैरपि।।१०५।।
मायुर-मुकुटै रम्यैः वेणुवेत्रैः सुमाल्यकैः ।।
वितानैः प्रसरैः शुभ्रैः प्रतिसारैर् नवैर् नवैः[४]।।१०६।।

जल–क्रीडोपस्करैश्च ताम्बूलामोद–दर्पणैः ।।
व्यजनैर् जल–भृङ्गारैः देश–कालानुसारिभिः[५] ।।१०७।।
अलंकृत्यैव सप्रेम स्वीयान् भक्तान् प्रदर्शयेत्[६] ।।
तौर्यत्रिकेन तत्रापि धूप–दीपादिनार्तिकम् ।।१०८।।

(ता पाछें राजभोग समर्पवेकी तैयारी करनी[१], तहां गायत्री–मन्त्रोच्चारण करिके तुलसी–शंखोदक समर्पिके[२], प्रभुन्को अरोगवेको निवेदन करनो[३])

ततो नानाविधैः शुद्धैश् चतुर्विध–सुभोजनैः ।।
सम्भृतं स्वर्णपात्रन्तु हरेर् अग्रे निवेदयेत् ।।१०९।।
[*१७]तुलसीं शंख–तोयेन गायत्र्यास्मिन् निधाय च ।।
‘‘एतत् समर्पितं देव! भक्त्या मे प्रतिगृह्यताम्’’ ।।११०।।

(राजभोग धरिके गोग्रास धरिवेको जानों[१] अरु जब भोग आय रहे होंय ता समय अवशिष्ट जप–पाठ मध्याह्नसन्ध्या आदि करि लेनो[२])

राजभोगं समर्प्यैवं, बहिर् गोग्रासम् आचरेत्[१] ।।
ततो–ऽवशिष्टं जाप्यादि माध्याह्निकम् इहाचरेत्[२] ।।१११।।

(समय भये आचमन कराय[१] बीडा और माला धराने[२] भोग सराय[३] झारी भरनी[४]. राजभोग सन्मुखमें आरसी दिखाय चंवर डुलाय[५] गायन–वादन सहित आरती करनी[६] दंडवत् प्रणाम करि अनौसर करने[७])

ततस्त्वाचमनं दत्वा[१] ताम्बूलं माल्यजां स्रजम्[२] ।।
अपसार्य विशोध्यात्र[३] नैवेद्यं जलम् आनयेत्[४] ।।११२।।
ततो राजविभूतीनाम् आदर्शैश् चामरैर् भजेत्[५] ।।

---

[१] सदा प्रभुकी इच्छाके अनुकूल रहना. [२] प्रभुके प्रतिकूलका त्याग करना.

गीताद्युत्सवतो ह्येनं नीराज्य च प्रणम्य च[६] ।।११३।।
हृदि कृत्वा पिधायास्य मन्दिरं बहिर् आव्रजेत्[७] ।।

(अनौसर करि प्रसादी माला–बीडा माथे चढ़ायके प्रभुमन्दिरकों प्रणाम करि घर लौटनो[१]. माध्याह्निक कर्म अवशिष्ट रह गयो होय तो पूरो करिके श्रीमद्भागवतको पाठ करनो[२], वैश्वदेव, यथाशक्ति भक्त अतिथि अथवा दीन जनन्कों महाप्रसाद लिवायके पीछे आप हु महाप्रसाद लेनो[३])

स्रग्–गन्धादि शिरो धृत्वा प्रणम्यैव गृहं व्रजेत्[१] ।।११४।।
माध्याह्निकं समाप्यैव श्रीमद्भागवतं पठेत्[२] ।।
ततो भक्तजनेभ्यो–ऽस्य प्रसादं शक्तितो भजेत् ।।११५।।
समागतेभ्यो विप्रेभ्यो दीनेभ्यश्च यथायथम् ।।
*[१८]**दत्वा स्वीय–जनैर् भुक्तिः वैश्वदेवोऽपि तत्र वै[३] ।।११६।।**

(पाछें कुटुंब–कुनबाके घर–गृहस्थीकी पापप्रचुर न होय एसी बात करनी होंय तो करनी[१], कहुं आजीविकार्थ जायवेकी गरज न होय तो शास्त्रावलोकन करनो[२], अथवा आजीविकार्थ व्यस्त रहनो पडतो होय तो हु एक याम तो भगवत्सेवा करनी ही[३]. दरिद्र कुटुंबार्त जे विद्वान् होंय तिनको भागवतको पाठ करनो[४], अविद्वान् होंय तिनकों विद्वानन्की सेवा करनी अथवा तिनके मुखसों भागवतश्रवण करनो[५])

ततो वार्तां स्वकीयानां बहु–पापैर् अनाकुलाम् ।।
यात्रार्थमेव सेवेत नाभिवेशो–ऽत्र सञ्चरेत्[१] ।।११७।।
सम्पन्न–वृत्तिर् भक्तानां शास्त्राणि परिभावयेत्[२] ।।
सर्वथा वृत्त्यभावे तु याममात्रं भजेद् हरिम्[३] ।।११८।।
दरिद्रश्च कुटुम्बार्तः विद्वान् भागवतं पठेत्[४] ।।

---

[३] प्रभुके ऊपर दृढ विश्वास रखना [४] एकमेव प्रभुको अपना स्वामी मानना.

अविद्वान् अस्य सेवायां साहाय्यं श्रवणं च वा[५]।।११९।।

(ता पाछें संज्ञा भये आचमन करि ताम्बूल गृहण करि मुखको शुद्ध करि तिलकधारण करे[१] यों स्वयं हु शुद्ध होनो[२])

सायं-सन्ध्याथ पुण्ड्राणि धृत्वा ताम्बूलतो मुखम् ।।
संशोध्याचम्य[१] शुद्धो-ऽसौ[२]... ... ...

(ता पाछें प्रभुन्को उत्थापन करानो[१], उत्थापन भोगमें कन्दमूल-फल धरने, पुष्पमाला धरानी, झारी भरनी[२]. पाछें आवनीके पद गावत-बजावत आरती करनी[३], सायंकालमें हु अपुनी शक्ति अनुसार शयनभोग धरने[४]. पाछें आरती करिके प्रभुन्कों शय्यापे पौढ़ाने[५])

... ... प्रभोर् उत्थापनं चरेत्[१]।।१२०।।
कन्दमूलैः फलैर् गव्यैः सुमाल्यैः सुजलैरपि[२] ।।
सन्तोष्य मुरजादीनां सङ्गीतेनापि तोषयेत्।।१२१।।
गायेद् भक्तकृतैः पद्यैः हृद्यैर् लीला-रहस्यकैः ।।
ततो नीराजयेन् नाथम् आयान्तं व्रजमण्डले[३]।।१२२।।
सायंकालेऽपि नैवेद्यं यथा-विभव-विस्तरः[४] ।।
नीराजनं च शयनं यथायोग्यं विभावयेत्[५]।।१२३।।

(प्रभुन्कों पौढायके उत्थापनतें पूर्व सन्ध्या भइ न होय तो पौढ़ायवेके बाद सायंसन्ध्या अरु सायंहोम करिके ही प्रसाद लेनो[१]. नित्य भागवतकथा पढ़ि-सुनिके[२] भगवच्चरणारविन्दको ध्यान धरिके सोयवे जानों[३]. या रीतिसों जीवनक्रमकों निभायवेवारो कृतकृत्य होइ श्रीहरिको प्राप्त होत हे[४])

***[११]सायंसन्ध्याऽऽहुतीश्चापि कृत्वा भुक्त्वा निवेदितम्[१]।।**

---

[५] आत्मा-आत्मीय सकल पदार्थ प्रभुको निवेदित करने [६] सदा दैन्य रखना.

कथयेद् शृणुयाद् वापि लीलां भगवतोऽन्वहम्[२] ।।१२४।।
ततः शयीत शुद्धोऽसौ भावयन् भगवत्पदम् ।।
सुतार्थिनी स्वपत्नी चेद् व्रजेत् तां जेतुम् इन्द्रियम्[३] ।।१२५।।
इत्येवं यस्य दिवसा यान्ति भक्तस्य भूतले ।।
सएव कृतकृत्यो–ऽस्ति हरिस् तम् अनुश्लिष्यति[४] ।।१२६।।

(ग्रन्थोपसंहार)

इत्येवं भक्ति–शास्त्रेषु यद् आचारो निरूपितः ।।
तद् आचारं भजेद् अत्र नान्यथा गतिरिष्यते ।।१२७।।

।।इति श्रीमद्भगवद्–वदनावतार–श्रीवल्लभदीक्षित–तनुज–
श्रीगोपीनाथ– दीक्षित–विरचिता [*२०]साधनदीपिका समाप्ता।।

उपर साधनदीपिका ग्रन्थके संशोधित पाठोंके मुद्रित पाठ :

*१ उत्तार्याः
*२ प्रपत्तेः
*३ लब्धानुग्रहम्
*४ जयन्ति
*५ हरयेऽनुकूलानि
*६ हरिभक्तापराधेषु
*७ हर्षं समानयेत्
*८ अनुग्रहो नियोज्योतः संग्रहः श्रुतिसम्मतेः
*९ शुद्धाशुद्धिं
*१० द्विमुखं तु शुचि पात्रमंशुकं...
*११ प्रशक्तो
*१२ तद्वय भ
*१३ आद्येऽपि नेष्टकश्चान्त्ये वैष्णवोधिकृतोत्रतः
*१४ स्मृतः
*१५ अभ्यङ्गान्मर्दनैः
*१६ स्तुत्वा कालिन्दिनीस्नानं
*१७ तुलसीशंखतोयेन
*१८ ...स्वीयजनैर्भुक्तिः
*१९ सायंसन्ध्याहुतिश्चापि
*२० साधनदीपकं समाप्तम्.

।। चतुःश्लोकी ।।

(पुष्टिमार्गीय जीवके ऐहिक पारलौकिक सर्वविध हितकों सिद्ध करिवेवारे व्रजाधिप ही सर्वात्मभावसों सेवनीय)

सदा सर्वात्मभावेन भजनीयो व्रजेश्वरः।।
करिष्यति सएवास्मद् ऐहिकं पारलौकिकम्।।१।।

(पुष्टिमार्गमें अन्याश्रय किंवा अन्य पुष्यिमार्गीयन्में अनात्मभाव कबहु न करनो)

अन्याश्रयो न कर्तव्यः सर्वथा बाधकस्तु सः।।
स्वकीयेष्वात्मभावश्च कर्तव्यः सर्वथा सदा।।२।।

(काल-कर्म-स्वभाव आदि दोषन्के अपहारक श्रीकृष्ण ही सदा सर्वात्मना सेव्य हें; श्रीकृष्णके भक्तन्में कबहु दोषबुद्धि न करनी)

सदा सर्वात्मना कृष्णः सेव्यः कालादिदोषनुत्।।
तद्भक्तेषु च निर्दोषभावेन स्थेयम् आदरात्।।३।।

(भगवान् श्रीकृष्णमें ही अपनो मन लगावनों जासों कलिकाल कठिन होयवेपे हु बाधक न होयगो)

भगवत्येव सततं स्थापनीयं मनः स्वयम्।।
कालोऽयं कठिनोऽपि श्रीकृष्णभक्तान् न बाधते।।४।।

।।इति श्रीविट्ठलेश्वरप्रभुचरणविरचिता चतुःश्लोकी समाप्ता।।

।। श्रीपरिवृढाष्टकम् ।।

कलिन्दोद्भूतायास् तटम् अनुचरन्तीं पशुपजां
रहस्येकां दृष्ट्वा नव-सुभग-वक्षोज-युगलाम्।।
दृढं नीविग्रन्थिं श्लथयति मृगाक्ष्या हठतरं
रति-प्रादुर्भावो भवतु सततं श्रीपरिवृढे।।१।।
समायाते स्वस्मिन् सुर-निलय-साम्यं गतवति
व्रजे वैशिष्ट्यं यो निज-पदगताब्जांकुश-यवैः।।
अकार्षीत् तस्मिन् मे यदुकुल-समुद्भासित-मणौ
रति-प्रादुर्भावो भवतु सततं श्रीपरिवृढे।।२।।
'हिही-ही-हीं'कारान् प्रतिपशु वने कुर्वति सदा
नमद्-ब्रह्मेशेन्द्र-प्रभृतिषु च मौनं धृतवति।।
मृगाक्षीभिः स्वेक्षा-नव-कुवलयैर् अर्चित-पदे
रति-प्रादुर्भावो भवतु सततं श्रीपरिवृढे।।३।।
सकृत् स्मृत्वा कुम्भी यम् इह परमं लोकम् अगमत्
चिरं ध्यात्वा धाता समधिगतवान् यं न तपसा।।
विभौ तस्मिन् मह्यं सजल-जलदाली-निभ-तनौ
रति-प्रादुर्भावो भवतु सततं श्रीपरिवृढे।।४।।
पराकाष्ठा प्रेम्णः पशुप-तरुणीनां क्षितिभुजां
सुदृप्तानां त्रासास्पदमखिल-भाग्यं यदुपते:।।

पुष्टिमार्गमें सप्ताहविधिसे भागवतका पाठ नहीं है, परन्तु नित्यपाठकी आज्ञा है.

विभुर् यस् तस्मिन् मे दर–विकच–जम्बालज–मुखे
रति–प्रादुर्भावो भवतु सततं श्रीपरिवृढे।।५।।
दर–प्रादुर्भूत–द्विज–गण–महः–पूरित–वने
चरन् कुहूवां राका–रुचिर–तर–शोभाधिक–रुचिः।।
हरिर् यस् तस्मिन् स्त्री–गण–परिवृतो नृत्यति सदा
रति–प्रादुर्भावो भवतु सततं श्रीपरिवृढे।।६।।
स्फुरद्–गुंजा–पुंजाकलित–निज–पादाब्ज–विलुठत्–
स्रजि श्यामा–कामास्पद–पद–युगे मेचक–रुचिः।।
वरांगे शृंगारं दधति शिखिनां पिच्छ–पटलै
रति–प्रादुर्भावो भवतु सततं श्रीपरिवृढे।।७।।
दुरन्तं दुःखाब्धिं हसित–सुधया शोषयति यो
यदास्येन्दुर् गोपी–नयन–नलिनानन्द–करणम्।।
अनंगः सांगत्वं व्रजति मम तस्मिन् मुररिपौ
रति–प्रादुर्भावो भवतु सततं श्रीपरिवृढे।।८।।
इदं यः स्तोत्रं श्रीपरिवृढ–समीपे पठति वा
शृणोति श्रद्धावान् रति–पति–पितुः पादयुगले।।
रतिं प्रेप्सुः शश्वत् कुवलय–दल–श्यामल–तनौ
रतिः प्रादुर्भूता भवति न चिरात् तस्य सुदृढा।।९।।

।।इति श्रीमद्–वल्लभाचार्यविरचितं श्रीपरिवृढाष्टकं समाप्तम्।।

।। श्रीकृष्णाष्टकम् ।।

श्रीगोप–गोकुल–विवर्धन नन्दसूनो
राधापते व्रजजनार्ति–हरावतार।।
मित्रात्मजा–तट–विहारण दीनबन्धो
दामोदरा(!)ऽच्युत विभो मम देहि दास्यम्।।१।।
श्रीराधिकारमण माधव गोकुलेन्द्र–
सूनो यदूत्तम रमार्चित–पादपद्म।।
श्रीश्रीनिवास पुरुषोत्तम विश्वमूर्ते
गोविन्द यादवपते मम देहि दास्यम्।।२।।
गोवर्धनोद्धरण गोकुलवल्लभाद्य
वंशोद्भटा(!)ऽऽलय हरे(!)ऽखिललोकनाथ।।
श्रीवासुदेव मधुसूदन विश्वनाथ
विश्वेश गोकुलपते मम देहि दास्यम्।।३।।
रासोत्सवप्रिय बलानुज सत्वराशे
भक्तानुकम्पित भवार्तिहरा(!)दिनाम।।
विज्ञानधाम गुणधाम किशोरमूर्ते
सर्वेश मङ्गलतनो मम देहि दास्यम्।।४।।
सद्‌धर्मपाल गरुडासन यादवेन्द्र
ब्रह्मण्यदेव यदुनन्दन भक्तिदान।।

संकर्षणप्रिय कृपालय देव विष्णो
सत्यप्रतिज्ञ भगवन् मम देहि दास्यम्।।५।।
गोपीजन–प्रियतम–क्रिययैकलभ्य
राधावर प्रियवरेण्य शरण्यनाथ।।
आश्चर्यबाल वरदेश्वर पूर्णकाम
विद्वत्तमाश्रय विभो मम देहि दास्यम्।।६।।
कन्दर्प–कोटि–मद–हारण तीर्थकीर्ते
विश्वैकवन्द्य करुणार्णव तीर्थपाद।।
सर्वज्ञ सर्ववरदा(!)ऽऽश्रयकल्पवृक्ष
नारायणा(!)ऽखिलगुरो मम देहि दास्यम्।।७।।
वृन्दावनेश्वर मुकुन्द मनोज्ञवेष
वंशी–विभूषित–कराम्बुज पद्मनेत्र।।
विश्वेश केशव व्रजोत्सव भक्तिवश्य
देवेश पाण्डवपते मम देहि दास्यम्।।८।।
श्रीकृष्णस्तव–रत्नमष्टकमिदं सर्वार्थदं वर्ण्यताम्
भक्तानां च हितं हरेश्च नितरां यो वै पठेत्पावनम् ।।
तस्यासौ व्रजराज–सूनुर् अतुलां भक्तिं स्वपादाम्बुजे
सत्सेव्ये प्रददाति गोकुलपतिः श्रीराधिकावल्लभः ।।९।।

।।इति श्रीमद्–वल्लभाचार्यविरचितं श्रीकृष्णाष्टकं समाप्तम्।।

लोकनिंदित, उद्वेगकारी तथा प्रभुको अप्रिय हों ऐसे पदार्थोंका समर्पण न करें.

।। श्रीगिरिराजधार्यष्टकम् ।।

भक्ताभिलाषाचरितानुसारी दुग्धादिचौर्येण यशोविसारी।।
कुमाररतानन्दित–घोषनारिः मम प्रभुः श्रीगिरिराजधारी।।१।।
व्रजांङ्गनावृन्द–सदाविहारी   अंङ्गैर्गुहाङ्गारतमोपहारी।।
क्रीडारसावेश–तमोऽभिसारी मम प्रभुः श्रीगिरिराजधारी।।२।।
वेणुस्वनानन्दित–पन्नगारी   रसातलानृत्यपद–प्रचारी।।
क्रीडन् वयस्याकृतिदैत्यमारी मम प्रभुः श्रीगिरिराजधारी।।३।।
पुलिन्ददाराहित–शम्बरारी   रमासदोदार–दयाप्रकारी।।
गोवर्धने कन्दफलोपहारी मम प्रभुः श्रीगिरिराजधारी।।४।।
कलिन्दजाकूलदुकूलहारी कुमारिकाकामकलावितारी।।
वृन्दावने गोधनवृन्दचारी मम प्रभुः श्रीगिरिराजधारी।।५।।
व्रजेन्द्रसर्वाधिक–शर्मकारी   महेन्द्रगर्वाधिक–गर्वहारी।।
वृन्दावने कन्दफलोपहारी मम प्रभुः श्रीगिरिराजधारी।।६।।
मनःकलानाथ–तमोविदारी वंशीरवाकारित–तत्कुमारी।।
रासोत्सवोद्वेल्लरसाब्धिसारी मम प्रभुः श्रीगिरिराजधारी।।७।।
मत्तद्विपोद्दाम–गतानुकारी   लुण्ठत्प्रसूनाप्रपदीनहारी।।
रामो रसस्पर्शकरप्रसारी मम प्रभुः श्रीगिरिराजधारी।।८।।

।। इति श्रीवल्लभाचार्यविरचितं गिरिराजधार्यष्टकं सम्पूर्णम् ।।

।। श्रीगोपीजनवल्लभाष्टकम् ।।

नवाम्बुदानीकमनोहराय प्रफुल्लराजीवविलोचनाय।।
वेणुस्वनैर्मोदितगोकुलाय नमोऽस्तु गोपीजनवल्लभाय।।१।।
किरीटकेयूरविभूषिताय ग्रैवेयमालामणिरञ्जिताय।।
स्फुरच्चलत्कांचनकुंडलाय नमोऽस्तु गोपीजनवल्लभाय।।२।।
दिव्याङ्गनावृन्दनिषेविताय स्मितप्रभाचारुमुखाम्बुजाय।।
त्रैलोक्यसम्मोहनसुन्दराय नमोऽस्तु गोपीजनवल्लभाय।।३।।
रत्नादिमूलालयसंश्रिताय कल्पद्रुमच्छायसमाश्रिताय।।
हेमस्फुरन्मण्डलमध्यगाय नमोऽस्तु गोपीजनवल्लभाय।।४।।
श्रीवत्सरोमावलिरंजिताय वक्षःस्थले कौस्तुभभूषिताय।।
सरोजकिंजल्कनिभांशुकाय नमोऽस्तु गोपीजनवल्लभाय।।५।।
दिव्याङ्गुलीयाङ्गुलिरञ्जिताय मयूरपिच्छच्छविशोभिताय।।
वन्यस्रजालंकृतविग्रहाय नमोऽस्तु गोपीजनवल्लभाय।।६।।
मुनीन्द्रवृन्दैरभिसंस्तुताय क्षरत्पयोगोकुलगोकुलाय।।
धर्मार्थकामामृतसाधकाय नमोऽस्तु गोपीजनवल्लभाय।।७।।
एनस्तमःस्तोमदिवाकराय भक्तस्य चिन्तामणिसाधकाय।।
अशेषदुःखामयभेषजाय नमोऽस्तु गोपीजनवल्लभाय।।८।।

।।इति श्रीमद्वल्लभाचार्यविरचितं गोपीजनवल्लभाष्टकं समाप्तम्।।

।। श्रीमधुराष्टकम् ।।

अधरं मधुरं वदनं मधुरं नयनं मधुरं हसितं मधुरम् ।।
हृदयं मधुरं गमनं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम्।।१।।
वचनं मधुरं चरितं मधुरं वसनं मधुरं वलितं मधुरम् ।।
चलितं मधुरं भ्रमितं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम्।।२।।
वेणुर् मधुरो रेणुर् मधुरो पाणिर् मधुरः पादौ मधुरौ ।।
नृत्यं मधुरं सख्यं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम्।।३।।
गीतं मधुरं पीतं मधुरं भुक्तं मधुरं सुप्तं मधुरम् ।।
रूपं मधुरं तिलकं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम्।।४।।
करणं मधुरं तरणं मधुरं हरणं मधुरं रमणं मधुरम् ।।
वमितं मधुरं शमितं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम्।।५।।
गुञ्जा मधुरा माला मधुरा यमुना मधुरा वीची मधुरा ।।
सलिलं मधुरं कमलं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम्।।६।।
गोपी मधुरा लीला मधुरा युक्तं मधुरं मुक्तं मधुरम् ।।
दृष्टं मधुरं शिष्टं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम्।।७।।
गोपा मधुरा गावो मधुरा यष्टिर् मधुरा सृष्टिर् मधुरा ।।
दलितं मधुरं फलितं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम्।।८।।

।।श्रीति श्रीमद्वल्लभाचार्यप्रकटितं मधुराष्टकं सम्पूर्णम्।।

श्रीकृष्णके सामने कभी भी अहंकार न करें, सन्मानकी अपेक्षा भी न रखें.

।। श्रीगोकुलेशाष्टकम् ।।

नन्दगोपभूप–वंशभूषणं विदूषणं
भूमिभूतिभूरि–भाग्यभाजनं भयापहम्।।
धेनुधर्मरक्षणावतीर्ण–पूर्णविग्रहं
नीलवारिवाहकान्ति–गोकुलेशमाश्रये।।१।।
गोपबालसुन्दरी–गणावृतं कलानिधिं
रासमण्डलीविहारकारि–कामसुन्दरम्।।
पद्मयोनिशंकरादि–देववृन्दवन्दितं
नीलवारिवाहकान्ति–गोकुलेशमाश्रये।।२।।
गोपराजरत्नराजि–मन्दिरानुरिङ्गणं
गोपबालबालिका–कलानुरुध्धगायनम्।।
सुन्दरीमनोजभाव–भाजनाम्बुजाननं
नीलवारिवाहकान्ति–गोकुलेशमाश्रये।।३।।
कंसकेशिकुञ्जराज–दुष्टदैत्यदारणम्
इन्द्रसृष्टवृष्टिवारि–वारणोध्धृताचलम्।।
कामधेनुकारिताभिधान–गानशोभितं
नीलवारिवाहकान्ति–गोकुलेशमाश्रये।।४।।

गोपिकागृहान्तगुप्त–गव्यचौर्यचंचलं
दुग्धभाण्डभेदभीत–लज्जतास्यपंकजम्।।
धेनुधूलिधूसराङ्ग–शोभिहारनूपुरं
नीलवारिवाहकान्ति–गोकुलेशमाश्रये।।५।।
वत्सधेनुगोपबाल–भीषणास्यवह्निपं
केकिपिच्छकल्पितावतंस–शोभिताननम्।।
वेणुवाद्यमत्तघोष–सुन्दरीमनोहरं
नीलवारिवाहकान्ति–गोकुलेशमाश्रये।।६।।
गर्वितामरेन्द्रकल्प–कल्पितान्नभोजनं
शारदारविन्दवृन्द–शोभिहंसजारतम्।।
दिव्यगन्धलुब्धभृंग–पारिजातमालिनं
नीलवारिवाहकान्ति–गोकुलेशमाश्रये।।७।।
वासरावसानगोष्ठ–गामिगोगणानुगं
धेनुदोहदेहगेह–मोहविस्मयक्रियम्।।
स्वीयगोकुलेशदान–दत्तभक्तरक्षणं
नीलवारिवाहकान्ति–गोकुलेशमाश्रये।।८।।

।। इति श्रीरघुनाथजीकृतं श्रीगोकुलेशाष्टकं सम्पूर्णम् ।।

।। श्रीगोपीजनवल्लभाष्टकम् ।।

सरोजनेत्राय कृपायुताय मन्दारमालापरिभूषिताय।।
उदारहासाय लसन्मुखाय नमोस्तु गोपीजनवल्लभाय।।१।।
आनन्दनन्दादिकदायकाय बकीबकप्राणविनाशकाय।।
मृगेन्द्रहस्ताग्रजभूषणाय नमोस्तु गोपीजनवल्लभाय।।२।।
गोपाललीलाकृतकौतुकाय गोपालकाजीवनजीवनाय।।
भक्तैकगम्याय नवप्रियाय नमोस्तु गोपीजनवल्लभाय।।३।।
मथान–भण्डाखिल–भंजनाय हैयङ्गवीनाशन–रंजनाय।।
गोस्वादुदुग्धामृतपोषिताय नमोस्तु गोपीजनवल्लभाय।।४।।
कलिन्दजा–कूल–कुतूहलाय किशोररूपाय मनोहराय।।
पिशङ्गवस्त्राय नरोत्तमाय नमोस्तु गोपीजनवल्लभाय।।५।।
धराधराभाय धराधराय शृङ्गार–हारावलि–शोभिताय।।
समस्तगर्गोक्तिसुलक्षणाय नमोस्तु गोपीजनवल्लभाय।।६।।
इभेन्द्र–कुम्भस्थलखण्डनाय विदेशवृन्दावनमण्डनाय।।
हंसाय कंसासुरमर्दनाय नमोस्तु गोपीजनवल्लभाय।।७।।
श्रीदेवकी–सूनु–विमोक्षणाय क्षत्तोद्धवाक्रूरवर–प्रदाय।।
गदासिशंखाब्जचतुर्भुजाय नमोस्तु गोपीजनवल्लभाय।।८।।

।। इति श्रीहरिदासोक्तं श्रीगोपीजनवल्लभाष्टकं सम्पूर्णम् ।।

।। स्वस्वामिपाणियुगलाष्टकम् ।।

आसाताम् एकशरणे विहिताकरणे हृदि।।
स्वामिनौ वल्भाधीश–विट्ठलेशाभिधौ सदा।।१।।
कृपां प्रकुरुतां दीने स्वतएव कृपाकरौ।।
स्वामिनौ वल्भाधीश–विट्ठलेशाभिधौ सदा।।२।।
प्रसीदेतां मयि श्रीमद्व्रजेशचरणाश्रये।।
स्वामिनौ वल्भाधीश–विट्ठलेशाभिधौ सदा।।३।।
दास्यं प्रयच्छतां मह्यं समस्तफलमूर्धगम्।।
स्वामिनौ वल्भाधीश–विट्ठलेशाभिधौ सदा।।४।।
कदापि माम् अनन्यं मा त्यजेतां निजसेवकम्।।
स्वामिनौ वल्भाधीश–विट्ठलेशाभिधौ सदा।।५।।
प्रमेयबलमात्रेण गृह्णीतां मत्करं दृढम्।।
स्वामिनौ वल्भाधीश–विट्ठलेशाभिधौ सदा।।६।।
आर्तिं निवारयेतां मे मस्तके हस्तधारणैः।।
स्वामिनौ वल्भाधीश–विट्ठलेशाभिधौ सदा।।७।।
मन्मूर्धनि विराजेतां प्रभुर् लोकविलक्षणम्।।
स्वामिनौ वल्भाधीश–विट्ठलेशाभिधौ सदा।।८।।

।। इति श्रीहरिदासविरचितं स्वस्वामिपाणियुगलाष्टकं सम्पूर्णम् ।।

।। श्रीकृष्णशरणाष्टकम् ।।

सर्वसाधन-हीनस्य पराधीनस्य सर्वतः।।
पापपीनस्य दीनस्य श्रीकृष्णः शरणं मम।।१।।
संसारसुख-सम्प्राप्ति-सम्मुखस्य विशेषतः।।
बहिर्मुखस्य सततं श्रीकृष्णः शरणं मम।।२।।
सदा विषयकामस्य देहारामस्य सर्वथा।।
दुष्टस्वभाव-वामस्य श्रीकृष्णः शरणं मम।।३।।
संसार-सर्पदंष्टस्य धर्मभ्रष्टस्य दुर्मतेः।।
लौकिक-प्राप्तिकष्टस्य श्रीकृष्णः शरणं मम।।४।।
विस्मृत-स्वीय-धर्मस्य कर्म-मोहित-चेतसः।।
स्वरूपज्ञान-शून्यस्य श्रीकृष्णः शरणं मम।।५।।
संसार-सिन्धु-मग्नस्य भग्नभावस्य दुष्कृतेः।।
दुर्भाव-लग्न-मनसः श्रीकृष्णः शरणं मम।।६।।
विवेक-धैर्य-भक्त्यादि-रहितस्य विशेषतः।।
विरुद्ध-करणासक्तेः श्रीकृष्णः शरणं मम।।७।।
विषयाक्रान्त-देहस्य वैमुख्य-हृत-सन्मतेः।।
इन्द्रियाश्व-गृहीतस्य श्रीकृष्णः शरणं मम।।८।।
एतद् अष्टक-पाठेन ह्येतदुक्तार्थभावनात्।।
निजाचार्यपदाम्भोज-सेवको दैन्यमाप्नुयात्।।९।।

।। इति श्रीहरिदासोक्तं श्रीकृष्णशरणाष्टकं सम्पूर्णम् ।।

।। पञ्चाक्षरमन्त्रगर्भस्तोत्रम् ।।

दुष्टतमोऽस्मि दयारहितोऽपि
विधर्म–विशेष–कृति–प्रार्थितोऽपि।।
दुर्जन–संगरतो–ऽप्यवरोपि च
‘कृष्ण तवास्मि’ न चास्मि परस्य।।१।।
लोभरतो–ऽप्यभिमान–युतोऽपि
परहित–करण–कृत्यकरोऽपि।।
क्रोधपरो–ऽप्यविवेक–हतोऽपि
‘कृष्ण तवास्मि’ न चास्मि परस्य।।२।।
काममयोऽपि गताश्रयणोऽपि
पराश्रयगाशय–चञ्चलितोऽपि।।
वैषयिकादर–संवलितोऽपि च
‘कृष्ण तवास्मि’ न चास्मि परस्य।।३।।
उत्तम–धैर्य–विभिन्न–तरोऽपि
निजोदर–पोषण–हेतुपरोऽपि।।
स्वीकृत–मत्सर–मोह–मदोऽपि च
‘कृष्ण तवास्मि’ न चास्मि परस्य।।४।।
भक्ति–पथादर–मात्रकृतोऽपि

व्यर्थ–विरुद्ध–कृति–प्रसृतोऽपि।।
त्वत्पद–सम्मुखता–पतितोऽपि च।।
‘कृष्ण तवास्मि’ न चास्मि परस्य।।५।।
संसृति–गेह–कलत्ररतोऽपि
व्यर्थ–धनार्जन–खेदसहोऽपि।।
उन्मद–मानस–संश्रयणोऽपि च
‘कृष्ण तवास्मि’ न चास्मि परस्य।।६।।
कृष्ण–पथेतर–धर्मरतोऽपि
स्वस्थिति–विस्मृतिमद्–हृदयोऽपि।।
दुर्जन–दुर्वचनादरणोऽपि च
‘कृष्ण तवास्मि’ न चास्मि परस्य।।७।।
वल्लभ–वंशजनुः–सबलोऽपि
स्वप्रभु–पादसरोज–फलोऽपि।।
लौकिक–वैदिक–वादखलोऽपि च
‘कृष्ण तवास्मि’ न चास्मि परस्य।।८।।
पञ्चाक्षर–महामन्त्रह्नगर्भितस्तोत्र–पाठतः।।
श्रीमदाचार्यदासानां तदीयत्वं भवेद् ध्रुवम्।।९।।

।। इति श्रीहरिदासोक्तं पञ्चाक्षरमन्त्रगर्भस्तोत्रं समाप्तम् ।।

।। श्रीपुरुषोत्तमनामसहस्रं स्तोत्रम् ।।

पुराण-पुरुषो विष्णुः 'पुरुषोत्तम' उच्यते ।।
नाम्नां सहस्रं वक्ष्यामि तस्य भागवतोद्धृतम्।।१।।
यस्य प्रसादाद् वागीशाः प्रजेशा विभवोन्नताः ।।
क्षुद्राअपि भवन्त्याशु श्रीकृष्णं तं नतोऽस्म्यहम्।।२।।
अनन्ता एव कृष्णस्य लीला नामप्रवर्तिकाः ।।
उक्ता भागवते गूढाः प्रकटा अपि कुत्रचित्।।३।।
अतस् तानि प्रवक्ष्यामि नामानि मुरवैरिणः ।।
सहस्रं यैस्तु पठितैः पठितं स्यात् शुकामृतम्।।४।।
कृष्ण-नाम-सहस्रस्य ऋषिर् अग्निर् निरूपितः ।।
गायत्री च तथा छन्दो देवता पुरुषोत्तमः।।५।।
विनियोगः समस्तेषु पुरुषार्थेषु वै मतः ।।
बीजं भक्तप्रियः शक्तिः सत्यवाग् उच्यते हरिः।।६।।
भक्तोद्धरण-यत्नस्तु मन्त्रो-ऽत्र परमो मतः ।।
अवतारित-भक्तांशः कीलकं परिकीर्तितम्।।७।।
अस्त्रं सर्वसमर्थश्च गोविन्दः कवचं मतम् ।।
पुरुषो ध्यानम् अत्रोक्तः सिद्धिः शरण संस्मृतिः।।८।।

प्रथमस्कन्धनामानि-अधिकारलीला

श्रीकृष्णः सच्चिदानन्दो नित्यलीला-विनोदकृत् ।।
सर्वागम-विनोदी च लक्ष्मीशः पुरुषोत्तमः।।९।।

आदिकालः सर्वकालः कालात्मा माययावृतः ।।
भक्तोद्धार–प्रयत्नात्मा जगत्कर्ता जगन्मयः।।१०।।
नाम–लीला–परो विष्णुः व्यासात्मा शुक–मोक्ष–दः ।।
व्यापि–वैकुण्ठ–दाता च श्रीमद्भागवतागमः।।११।।
शुकवागमृताब्धीन्दुः शौनकाद्यखिलेष्टदः ।।
भक्ति–प्रवर्तकस् त्राता व्यास–चिन्ता–विनाशकः।।१२।।
सर्वसिद्धान्त–वागात्मा नारदाद्यखिलेष्टदः ।।
अन्तरात्मा ध्यानगम्यो भक्ति–रत्न–प्रदायकः।।१३।।
मुक्तोपसृप्यः पूर्णात्मा मुक्तानां रतिवर्धनः ।।
भक्त–कार्यैक–निरतो द्रौण्यस्त्र–विनिवारकः।।१४।।
भक्त–स्मय–प्रणेता च भक्तवाक्–परिपालकः ।।
ब्रह्मण्य–देवो धर्मात्मा भक्तानां च परीक्षकः।।१५।।
आसन्न–हित–कर्ता च माया–हित–करः प्रभुः ।।
उत्तरा–प्राणदाता च ब्रह्मास्त्र–विनिवारकः।।१६।।
सर्वतः पाण्डव–पतिः परीक्षिच्छुद्धि–कारणम् ।।
गूढात्मा सर्ववेदेषु भक्तैक–हृदयङ्गमः।।१७।।
कुन्ती–स्तुत्यः प्रसन्नात्मा परमाद्भुत–कार्य–कृत् ।।
भीष्म–मुक्ति–प्रदः स्वामी भक्तमोह–निवारकः।।१८।।
सर्वावस्थासु संसेव्यः समः सुख–हित–प्रदः ।।
कृतकृत्यः सर्वसाक्षी भक्त–स्त्री–रति–वर्धनः।।१९।।

भगवत्सेवा अपनी शक्ति-सामर्थ्यके अनुसार करें, देखादेखी न करें.

**सर्व–सौभाग्य–निलयः परमाश्चर्य–रूप–धृक् ।।
अनन्य–पुरुष–स्वामी द्वारका–भाग्य–भाजनम्।।२०।।
बीज–संस्कार–कर्ता च परीक्षिज्ज्ञान–पोषकः ।।
सर्वत्र–पूर्ण–गुणकः सर्व–भूषण–भूषितः।।२१।।
सर्व–लक्षण–दाता च धृतराष्ट्र–विमुक्ति–दः ।।
सन्मार्ग–रक्षको नित्यं विदुर–प्रीति–पूरकः।।२२।।
लीला–व्यामोह–कर्ता च काल–धर्म–प्रवर्तकः ।।
पाण्डवानां मोक्षदाता परीक्षिद्–भाग्यवर्धनः।।२३।।
कलि–निग्रह–कर्ता च धर्मादीनां च पोषकः ।।
सत्सङ्ग–ज्ञान–हेतुश्च श्रीभागवत–कारणम्।।२४।।
प्राकृतादृष्ट–मार्गश्च ... ...**

द्वितीयस्कन्धनामानि–ज्ञान(साधन)लीला

**... ... ... श्रोतव्यः सकलागमैः ।।
कीर्तितव्यः शुद्धभावैः स्मर्तव्यश्चात्मवित्तमैः।।२५।।
अनेक–मार्ग–कर्ता च नानाविध–गति–प्रदः ।।
पुरुषः सकलाधारः सत्त्वैक–निलयात्मभूः।।२६।।
सर्वध्येयो योगगम्यो भक्त्या ग्राह्यः सुरप्रियः ।।
जन्मादि–सार्थककृतिः लीलाकर्ता पतिः सताम्।।२७।।
आदिकर्ता तत्त्वकर्ता सर्वकर्ता विशारदः ।।
नानावतारकर्ता च ब्रह्माविर्भाव–कारणम्।।२८।।**

---

१०० सम्प्रदायके दीक्षामन्त्र अष्टाक्षर–पंचाक्षरका जप नित्य नियमसे अवश्य करें.

दश-लीला-विनोदी च नाना-सृष्टि-प्रवर्तकः ।।
अनेक-कल्प-कर्ता च सर्वदोष-विवर्जितः।।२९।।

तृतीयस्कन्धनामानि-सर्गलीला

वैराग्य-हेतुः तीर्थात्मा सर्व-तीर्थ-फल-प्रदः ।।
तीर्थ-शुद्धैक-निलयः स्वमार्ग-परिपोषकः।।३०।।
तीर्थ-कीर्तिः भक्त-गम्यो भक्तानुशय-कार्यकृत् ।।
भक्ततुल्यः सर्वतुल्यः स्वेच्छा-सर्व-प्रवर्तकः।।३१।।
गुणातीतो-ऽनवद्यात्मा सर्ग-लीला-प्रवर्तकः ।।
साक्षात् सर्व-जगत्कर्ता महदादि-प्रवर्तकः।।३२।।
माया-प्रवर्तकः साक्षी माया-रति-विवर्धनः ।।
आकाशात्मा चतुर्मूर्तिः चतुर्धा भूतभावनः।।३३।।
रजः-प्रवर्तको ब्रह्मा मरीच्यादि-पितामहः ।।
वेदकर्ता यज्ञकर्ता सर्वकर्ता-ऽमितात्मकः।।३४।।
अनेक-सृष्टि-कर्ता च दशधा-सृष्टि-कारकः ।।
यज्ञाङ्गो यज्ञवाराहो भूधरो भूमिपालकः।।३५।।
सेतुर्विधरणो जैत्रो हिरण्याक्षान्तकः सुरः ।।
दिति-कश्यप-कामैक-हेतुह्नसृष्टि-प्रवर्तकः।।३६।।
देवाभय-प्रदाता च वैकुण्ठाधिपतिर् महान् ।।
सर्व-गर्व-प्रहारी च सनकाद्यखिलार्थ-दः।।३७।।
सर्वाश्वासन-कर्ता च भक्ततुल्याहव-प्रदः ।।

काल-लक्षण-हेतुश्च सर्वार्थ-ज्ञापकः परः।।३८।।
भक्तोन्नति-करः सर्वह्नप्रकार-सुख-दायकः ।।
नाना-युद्ध-प्रहरणो ब्रह्म-शाप-विमोचकः।।३९।।
पुष्टि-सर्ग-प्रणेता च गुण-सृष्टि-प्रवर्तकः ।।
कर्दमेष्ट-प्रदाता च देवहूत्यखिलार्थ-दः।।४०।।
शुक्ल-नारायणः सत्य-कालधर्म-प्रवर्तकः ।।
ज्ञानावतारः शान्तात्मा कपिलः काल-नाशकः।।४१।।
त्रिगुणाधिपतिः साङ्ख्य-शास्त्र-कर्ता विशारदः ।।
सर्ग-दूषण-हारी च पुष्टि-मोक्ष-प्रवर्तकः।।४२।।
लौकिकानन्द-दाता च ब्रह्मानन्द-प्रवर्तकः ।।
भक्तिसिद्धान्त-वक्ता च सगुण-ज्ञान-दीपकः।।४३।।
आत्म-प्रदः पूर्ण-कामो योगात्मा योग-भावितः ।।
जीवन्मुक्तिप्रदः श्रीमान् अन्य-भक्ति-प्रवर्तकः।।४४।।
काल-सामर्थ्य-दाता च काल-दोष-निवारकः ।।
गर्भोत्तम-ज्ञान-दाता कर्ममार्ग-नियामकः।।४५।।
सर्वमार्ग-निराकर्ता भक्ति-मार्गैक-पोषकः ।।
सिद्धि-हेतुः सर्वहेतुः सर्वाश्चर्यैक-कारणम्।।४६।।
चेतनाचेतन-पतिः समुद्र-परि-पूजितः ।।
साङ्ख्याचार्य-स्तुतः सिद्ध-पूजितः सर्वपूजितः।।४७।।

---

१०२ संध्यादि नित्य तथा श्राद्धादि नैमित्तिक सभी कर्म प्रभुके महाप्रसादसे ही करें.

विसर्ग–कर्ता सर्वेशः कोटि–सूर्य–सम–प्रभः ।।
अनन्त–गुण–गम्भीरो महापुरुष–पूजितः।।४८।।
अनन्त–सुख–दाता च ब्रह्म–कोटि–प्रजापतिः ।।
सुधाकोटि–स्वास्थ्यहेतुः कामधुक् कोटिकामदः।।४९।।
समुद्र–कोटि–गम्भीरः तीर्थ–कोटि–समाह्वयः ।।
सुमेरु–कोटि–निष्कम्पः कोटिब्रह्माण्ड–विग्रहः।।५०।।
कोट्यश्व–मेध–पापघ्नो वायु–कोटि–महाबलः ।।
कोटीन्दु–जगदानन्दी शिव–कोटि–प्रसादकृत्।।५१।।
सर्व–सद्–गुण–माहात्म्यः सर्व–सद्–गुण–भाजनम् ।।
मन्वादि–प्रेरको धर्मो यज्ञनारायणः परः।।५२।।
आकूति–सूनुः देवेन्द्रो रुचि–जन्मा–ऽभय–प्रदः ।।
दक्षिणा–पतिरोजस्वी क्रियाशक्तिः परायणः।।५३।।
दत्तात्रेयो योग–पतिः योग–मार्ग–प्रवर्तकः ।।
अनसूया–गर्भ–रत्नम् ऋषि–वंश–विवर्धनः।।५४।।
गुण–त्रय–विभाग–ज्ञः चतुर्वर्ग–विशारदः ।।
नारायणो धर्मसूनुः मूर्ति–पुण्य–यशस्करः।।५५।।
सहस्र–कवचच्छेदी तपः–सारो नर–प्रियः ।।
विश्वानन्द–प्रदः कर्म–साक्षी भारत–पूजितः।।५६।।
अनन्ताद्भुत–माहात्म्यो बदरी–स्थान–भूषणम् ।।

प्रभु जिसपर कृपा करते हैं उसकी लौकिक-वैदिक दृढासक्ति भी छूट जाती है.

जितकामो जितक्रोधो जितसङ्गो जितेन्द्रियः।।५७।।
उर्वशी–प्रभवः स्वर्ग–सुख–दायी स्थिति–प्रदः ।।
अमानी मानदो गोप्ता भगवच्छास्त्र–बोधकः।।५८।।
ब्रह्मादि–वन्द्यो हंसः श्रीः माया–वैभव–कारणम् ।।
विविधानन्त–सर्गात्मा विश्व–पूरण–तत्परः।।५९।।
यज्ञ–जीवन–हेतुश्च यज्ञ–स्वामीष्ट–बोधकः ।।
नाना–सिद्धान्त–गम्यश्च सप्ततन्तुश्च षड्गुणः।।६०।।
प्रति–सर्ग–जगत्कर्ता नाना–लीला–विशारदः ।।
ध्रुवप्रियो ध्रुवस्वामी चिन्तिताधिक–दायकः।।६१।।
दुर्लभानन्त–फलदो दया–निधिरमित्र–हा ।।
अङ्गस्वामी कृपासारो वैन्यो भूमि–नियामकः।।६२।।
भूमि–दोग्धा प्रजा–प्राण–पालनैक–परायणः ।।
यशोदाता ज्ञानदाता सर्व–धर्म–प्रदर्शकः।।६३।।
पुरञ्जनो जगन्मित्रं विसर्गान्त–प्रदर्शकः ।।
प्रचेतसां पतिश्चित्र–भक्तिहेतुः जनार्दनः।।६४।।
स्मृतिहेतु–ब्रह्मभाव–सायुज्यादि–प्रदः शुभः ।।
विजयी … … … … … … … … …

पञ्चमस्कन्धनामानि–स्थान लीला

… स्थिति–लीलाब्धिः अच्युतो विजय–प्रदः।।६५।।
स्व–सामर्थ्य–प्रदो भक्त–कीर्ति–हेतुः अधोक्षजः ।।

---

[१०४] वैष्णवको नवरात्रि, शिवरात्रि, गौरी, करवाचौथ आदि व्रत नहीं करने चाहिये.

प्रियव्रत-प्रियस्वामी स्वेच्छा-वाद-विशारदः।।६६।।
सङ्ग्च्यगम्यः स्व-प्रकाशः सर्व-सङ्ग-विवर्जितः ।।
इच्छायां च समर्यादः त्यागमात्रोपलम्भनः।।६७।।
अचिन्त्य-कार्य-कर्ता च तर्कागोचर-कार्य-कृत् ।।
शृङ्गार-रस-मर्यादा आग्नीध्र-रस-भाजनम्।।६८।।
नाभीष्ट-पूरकः कर्म-मर्यादा-दर्शनोत्सुकः ।।
सर्व-रूपो-ऽद्भुत-तमो मर्यादा-पुरुषोत्तमः।।६९।।
सर्वरूपेषु सत्यात्मा काल-साक्षी शशि-प्रभः ।।
मेरुदेवी-व्रत-फलम् ऋषभो भगलक्षणः।।७०।।
जगत्-सन्तर्पको मेघ-रूपी देवेन्द्र-दर्प-हा ।।
जयन्ती-पतिरत्यन्तह्नप्रमाणाशेष-लौकिकः।।७१।।
शतधा-न्यस्त-भूतात्मा शतानन्दो गुण-प्रसूः ।।
वैष्णवोत्पादन-परः सर्व-धर्मोपदेशकः।।७२।।
पर-हंस-क्रिया-गोप्ता योग-चर्या-प्रदर्शकः ।।
चतुर्थाश्रम-निर्णेता सदानन्द-शरीरवान्।।७३।।
प्रदर्शितान्य-धर्मश्च भरत-स्वाम्यपार-कृत् ।।
यथावत्-कर्म-कर्ता च सङ्गानिष्ट-प्रदर्शकः।।७४।।
आवश्यक-पुनर्जन्मह्नकर्ममार्ग-प्रदर्शकः ।।
यज्ञ-रूप-मृगः शान्तः सहिष्णुः सत्पराक्रमः।।७५।।
रहूगण-गति-ज्ञश्च रहूगण-विमोचकः ।।

भवाटवी–तत्त्व–वक्ता बहिर्मुख–हिते रतः।।७६।।
गय–स्वामी स्थान–वंश–कर्ता स्थान–विभेद–कृत् ।।
पुरुषावयवो भूमि–विशेष–विनिरूपकः।।७७।।
जम्बू–द्वीप–पतिः मेरु–नाभि–पद्मरुहाश्रयः ।।
नानाविभूति–लीलाढ्यो गङ्गोत्पत्ति–निदानकृत्।।७८।।
गङ्गा–माहात्म्य–हेतुश्च गङ्गारूपो–ऽति–गूढ–कृत् ।।
वैकुण्ठ–देह–हेत्वम्बु–जन्म–कृत् सर्व–पावनः।।७९।।
शिवस्वामी शिवोपास्यो गूढः सङ्कर्षणात्मकः ।।
स्थान–रक्षार्थ–मत्स्यादि–रूपः सर्वैक–पूजितः।।८०।।
उपास्य–नाना–रूपात्मा ज्योतिरूपो गतिप्रदः ।।
सूर्यनारायणो वेद–कान्तिरुज्वल–वेष–धृक्।।८१।।
हंसो–ऽन्तरिक्ष–गमनः सर्व–प्रसव–कारणम् ।।
आनन्द–कर्ता वसुदो बुधो वाक्पतिरुज्वलः।।८२।।
कालात्मा काल–कालश्च कालच्छेदकृदुत्तमः ।।
शिशुमारः सर्वमूर्तिः आधिदैविक–रूप–धृक्।।८३।।
अनन्त–सुख–भोगाढ्यो विवरैश्वर्य–भाजनम् ।।
सङ्कर्षणो दैत्य–पतिः सर्वाधारो बृहद्–वपुः।।८४।।
अनन्त–नरकच्छेदी स्मृति–मात्रार्ति–नाशनः ।।
सर्वानुग्रह–कर्ता च … … … … … …

अवैष्णवको स्वसेव्यप्रभुके दर्शन करानेसे एक वर्षकी सेवा विफल होती है.

... ... मर्यादा–भिन्न–शास्त्रकृत्।।८५।।
कालान्तक–भयच्छेदी नाम–सामर्थ्य–रूप–धृक् ।।
उद्धारानर्ह–गोप्तात्मा नामादि–प्रेरकोत्तमः।।८६।।
अजामिल–महादुष्ट–मोचको–ऽघ–विमोचकः ।।
धर्मवक्ता–ऽक्लिष्टवक्ता विष्णुधर्म–स्वरूपधृक्।।८७।।
सन्मार्ग–प्रेरको धर्ता त्याग–हेतुः अधोक्षजः ।।
वैकुण्ठ–पुर–नेता च दास–संवृद्धि–कारकः।।८८।।
दक्ष–प्रसाद–कृद्–हंसह्नगुह्य–स्तुति–विभावनः ।।
स्वाभिप्राय–प्रवक्ता च मुक्तजीव–प्रसूति–कृत्।।८९।।
नारद–प्रेरणात्मा च हर्यश्व–ब्रह्म–भावनः ।।
शबलाश्व–हितो गूढ–वाक्यार्थ–ज्ञापन–क्षमः।।९०।।
गुढार्थ–ज्ञापनः सर्व–मोक्षानन्द–प्रतिष्ठितः ।।
पुष्टि–प्ररोह–हेतुश्च दासैक–ज्ञात–हृद्गतः।।९१।।
शान्ति–कर्ता सुहित–कृत् स्त्री–प्रसूः सर्व–काम–धृक् ।।
पुष्टि–वंश–प्रणेता च विश्वरूपेष्ट–देवता।।९२।।
कवचात्मा पालनात्मा च(?) वर्मोपचिति–कारणम् ।।
विश्वरूप–शिरच्छेदी त्वाष्ट्र–यज्ञ–विनाशकः।।९३।।
वृत्र–स्वामी वृत्र–गम्यो वृत्र–व्रत–परायणः ।।
वृत्रकीर्तिः वृत्रमोक्षो मघवत्–प्राण–रक्षकः।।९४।।

अश्वमेध–हविर्भोक्ता देवेन्द्रामीव–नाशकः ।।
संसार–मोचकश् चित्रह्नकेतु–बोधन–तत्परः।।९५।।
मन्त्र–सिद्धिः सिद्धि–हेतुः सुसिद्धि–फल–दायकः ।।
महादेव–तिरस्कर्ता भक्त्यै पूर्वार्थ–नाशकः।।९६।।
देव–ब्राह्मण–विद्वेषह्नवैमुख्य–ज्ञापकः शिवः ।।
आदित्यो दैत्य–राजश्च महत्पतिर् अचिन्त्यकृत्।।९७।।
मरुतां भेदकस् त्राता व्रतात्मा पुम्प्रसूति–कृत् ।।

सप्तमस्कन्धनामानि–ऊति लीला

कर्मात्मा वासनात्मा च ऊति–लीला–परायणः।।९८।।
सम–दैत्यसुरः स्वात्मा वैषम्य–ज्ञान–संश्रयः ।।
देहाद्युपाधि–रहितः सर्वज्ञः सर्व–हेतु–विद्।।९९।।
ब्रह्म–वाक्–स्थापन–परः स्व–जन्मावधि–कार्यकृत् ।।
सदसद्–वासना–हेतुः त्रिसत्यो भक्त–मोचकः।।१००।।
हिरण्य–कशिपु–द्‌वेषी प्रविष्टात्माति–भीषणः ।।
शान्तिज्ञानादि–हेतुश्च प्रह्‌लादोत्पत्ति–कारणम्।।१०१।।
दैत्य–सिद्धान्त–सद्–वक्ता तपः–सार उदार–धीः ।।
दैत्य–हेतु–प्रकटनो भक्ति–चिह्‌न–प्रकाशकः।।१०२।।
सद्वेष–हेतुः सद्वेषह्नवासनात्मा निरन्तरः ।।
नैष्ठुर्य–सीमा प्रह्लाद–वत्सलः सङ्ग–दोष–हा।।१०३।।
महानुभावः साकारः सर्वाकारः प्रमाणभूः ।।

---

१०८ प्रभुके नामपर जो लोग भेट-मनोरथ मांगते हैं वो अति अधम हैं, उनसे बचें.

स्तम्भ–प्रसूतिर्–नृहरिः नृसिंहो भीम–विक्रमः।।१०४।।
विकटास्यो ललज्–जिह्वो नख–शस्त्रो जवोत्कटः ।।
हिरण्यकशिपुच्छेदी क्रूर–दैत्य–निवारकः।।१०५।।
सिंहासन–स्थः क्रोधात्मा लक्ष्मी–भय–विवर्धनः ।।
ब्रह्माद्यत्यन्त–भयभूः अपूर्वाचिन्त्य–रूप–धृक्।।१०६।।
भक्तैक–शान्त–हृदयो भक्त–स्तुत्यः स्तुति–प्रियः ।।
भक्ताङ्ग–लेहनोद्भूत–क्रोध–पुञ्जः प्रशान्तधीः।।१०७।।
स्मृति–मात्र–भय–त्राता ब्रह्म–बुद्धि–प्रदायकः ।।
गोरूप–धार्यमृत–पाः शिव–कीर्ति–विवर्धनः।।१०८।।
धर्मात्मा सर्व–कर्मात्मा विशेषात्मा–श्रम–प्रभुः ।।
संसारमग्न–स्वोद्धर्ता सन्मार्गाखिल–तत्त्ववाक्।।१०९।।
आचारात्मा सदाचारः ... ...

अष्टमस्कन्धनामानि–मन्वन्तर लीला

... ... मन्वन्तर–विभावनः ।।
स्मृत्या–ऽशेषाशुभहरो गजेन्द्रस्मृतिकारणम्।।११०।।
जाति–स्मरण–हेत्वैक–पूजा–भक्ति–स्वरूप–दः ।।
यज्ञो भयान् मनुत्राता विभुः ब्रह्म–व्रताश्रयः।।१११।।
सत्यसेनो दुष्ट–घाती हरिर्गज–विमोचकः ।।
वैकुण्ठो लोककर्ता च अजितो–ऽमृत–कारणम्।।११२।।
उरुक्रमो भूमि–हर्ता सार्वभौमो बलि–प्रियः ।।

विभुः सर्वहितैकात्मा विष्वक्सेनः शिवप्रियः।।११३।।
धर्मसेतुः लोक–धृतिः सुधामान्तर–पालकः ।।
उपहर्ता–योगपतिः बृहद्भानुः क्रिया–पतिः।।११४।।
चतुर्दश–प्रमाणात्मा धर्मो मन्वादि–बोधकः ।।
लक्ष्मी–भोगैक–निलयः देव–मन्त्र–प्रदायकः।।११५।।
दैत्य–व्यामोहकः साक्षाद्–गरुड–स्कन्ध–संश्रयः ।।
लीला–मन्दर–धारी च दैत्य–वासुकि–पूजितः।।११६।।
समुद्रोन्मन्थनायत्तो–ऽविघ्नकर्ता स्ववाक्य–कृत् ।।
आदिकूर्मः पवित्रात्मा मन्दरा–घर्षणोत्सुकः।।११७।।
श्वासैजदब्धिर्वा–वीचिः कल्पान्तावधि–कार्यकृत् ।।
चतुर्दश–महा–रत्नो लक्ष्मी–सौभाग्य–वर्धनः।।११८।।
धन्वन्तरिः सुधा–हस्तो यज्ञ–भोक्तार्ति–नाशनः ।।
आयुर्वेद–प्रणेता च देव दैत्याखिलार्चितः।।११९।।
बुद्धि–व्यामोहको देवह्नकार्य–साधन–तत्परः ।।
स्त्रीरूपो मायया वक्ता दैत्यान्तःकरण–प्रियः।।१२०।।
पायितामृत–देवांशो युद्ध–हेतु–स्मृति–प्रदः ।।
सुमालि–मालिवधकृत् माल्यवत्–प्राणहारकः।।१२१।।
कालनेमि–शिरच्छेदी दैत्य–यज्ञ–विनाशकः ।।
इन्द्र–सामर्थ्यदाता च दैत्य–शेष–स्थितिप्रियः।।१२२।।
शिव–व्यामोहको मायी भृगु–मन्त्र–स्व–शक्ति–दः ।।

---

११० सार्वजनिक सेवा, जाहिर दर्शन, जाहिर मनोरथ पुष्टिमार्गसे अत्यंत विरुद्ध हैं.

बलि–जीवन–कर्ता च स्वर्गहेतुः व्रतार्चितः।।१२३।।
आदित्यानन्द–कर्ता च कश्यपादिति–सम्भवः ।।
उपेन्द्र इन्द्रावरजो वामन–ब्रह्मरूप–धृक्।।१२४।।
ब्रह्मादि–सेवित–वपुः यज्ञ–पावन–तत्परः ।।
याच्ञोपदेश–कर्ता च ज्ञापिताशेष–संस्थितिः।।१२५।।
सत्यार्थ–प्रेरकः सर्व–हर्ता गर्व–विनाशकः ।।
त्रिविक्रमः त्रिलोकात्मा विश्वमूर्तिः पृथुश्रवाः।।१२६।।
पाश–बद्ध–बलिः सर्वह्नदैत्य–पक्षोपमर्दकः ।।
सुतल–स्थापित–बलिः स्वर्गाधिक–सुखप्रदः।।१२७।।
कर्म–सम्पूर्ति–कर्ता च स्वर्ग–संस्थापितामरः ।।
ज्ञातत्रिविध–धर्मात्मा महामीनो–ऽब्धिसंश्रयः।।१२८।।
सत्यव्रत–प्रियो गोप्ता मत्स्य–मूर्ति–धृत–श्रुतिः ।।
शृङ्ग–बद्ध–धृत–क्षोणिः सर्वार्थ–ज्ञापको गुरुः।।१२९।।

नवमस्कन्धनामानि–ईशानुकथालीला

ईश–सेवक–लीलात्मा सूर्य–वंश–प्रवर्तकः ।।
सोम–वंशोद्भव–करः मनु–पुत्र–गति–प्रदः।।१३०।।
अम्बरीष–प्रियः साधुः दुर्वासा–गर्व–नाशकः ।।
ब्रह्म–शापोपसंहर्ता भक्त–कीर्ति–विवर्धनः।।१३१।।
इक्ष्वाकु–वंश–जनकः सगराद्यखिलार्थदः ।।
भगीरथ–महायत्नो गङ्गा–धौताङ्घ्रि–पङ्कजः।।१३२।।

ब्रह्म–स्वामी शिव–स्वामी सगरात्मज–मुक्ति–दः ।।
खट्वाङ्ग–मोक्ष–हेतुश्च रघुवंश–विवर्धनः।।१३३।।
रघुनाथो रामचन्द्रो रामभद्रो रघु–प्रियः ।।
अनन्तकीर्तिः पुण्यात्मा पुण्यश्लोकैकभास्करः।।१३४।।
कोशलेन्द्रः प्रमाणात्मा सेव्यो दशरथात्मजः ।।
लक्ष्मणो भरतश्चैव शत्रुघ्नो व्यूहविग्रहः।।१३५।।
विश्वामित्र–प्रियो दान्तः ताडका–वध–मोक्ष–दः ।।
वायव्यास्त्राब्धि–निक्षिप्त–मारीचश्च सुबाहुहा।।१३६।।
वृष–ध्वज–धनुर्भङ्गह्नप्राप्त–सीता–महोत्सवः ।।
सीतापतिः भृगुपति–गर्व–पर्वत–नाशकः।।१३७।।
अयोध्यास्थ–महाभोगह्नयुक्तलक्ष्मी–विनोदवान् ।।
कैकेयी–वाक्य–कर्ता च पितृवाक्–परिपालकः।।१३८।।
वैराग्य–बोधको–ऽनन्य–सात्त्विक–स्थान–बोधकः ।।
अहल्या–दुःख–हारी च गुहस्वामी सलक्ष्मणः।।१३९।।
चित्रकूट–प्रिय–स्थानो दण्डकारण्य–पावनः ।।
शरभङ्गसुतीक्ष्णादिह्नपूजितोऽगस्त्यभाग्यभूः।।१४०।।
ऋषि–सम्प्रार्थित–कृतिः विराध–वध–पण्डितः ।।
छिन्न–शूर्पणखा–नासः खर–दुषण–घातकः।।१४१।।
एक–बाण–हता–ऽनेक–सहस्र–बल–राक्षसः ।।
मारीच–घाती नियतह्नसीतासम्बन्धशोभितः।।१४२।।

सीता–वियोग–नाट्यश्च जटायुर्वध–मोक्ष–दः ।।
शबरी–पूजितो भक्तह्नहनुमत्–प्रमुखावृतः।।१४३।।
दुन्दुभ्यस्थि–प्रहरणः सप्त–ताल–विभेदनः ।।
सुग्रीव–राज्यदो वालीह्नघाती सागर।शोषणः।।१४४।।
सेतु–बन्धन–कर्ता च विभीषण–हित–प्रदः ।।
रावणादि–शिरच्छेदी राक्षसाघौघ–नाशकः।।१४५।।
सीता–ऽभय–प्रदाता च पुष्पकागमनोत्सुकः ।।
अयोध्या–पतिरत्यन्तह्नसर्व–लोक–सुखप्रदः।।१४६।।
मथुरा–पुर–निर्माता सुकृतज्ञ–स्वरूप–दः ।।
जनक–ज्ञान–गम्यश्च ऐलान्त–प्रकट–श्रुतिः।।१४७।।
हैहयान्त–करो रामः दुष्ट–क्षत्र–विनाशकः ।।
सोम–वंश–हितैकात्मा यदु–वंश–विवर्धनः।।१४८।।

दशमस्कन्धपूर्वार्धनामानि–निरोधलीला

परब्रह्मावतरणः केशवः क्लेश–नाशनः ।।
भूमि–भारावतरणो भक्तार्थाऽखिल–मानसः।।१४९।।
सर्व–भक्त–निरोधात्मा लीला–ऽनन्त–निरोध–कृत् ।।
भूमिष्ठ–परमानन्दो देवकी–शुद्धि–कारणम्।।१५०।।
वसुदेव–ज्ञान–निष्ठह्नसम–जीव–निवारकः ।।
सर्व–वैराग्य–करणह्नस्व–लीलाधार–शोधकः ।।१५१।।
माया–ज्ञापन–कर्ता च शेष–सम्भार–सम्भृतिः ।।

भक्तक्लेश–परिज्ञाता तन्निवारण–तत्परः।।१५२।।
आविष्ट–वसुदेवांशः देवकी–गर्भ–भूषणम् ।।
पूर्ण–तेजो–मयः पूर्णः कंसाधृष्य–प्रतापवान्।।१५३।।
विवेक–ज्ञान–दाता च ब्रह्माद्यखिल–संस्तुतः ।।
सत्यो जगत्कल्पतरुः नाना–रूप–विमोहनः।।१५४।।
भक्ति–मार्ग–प्रतिष्ठाता विद्वन्–मोह–प्रवर्तकः ।।
मूल–काल–गुण–द्रष्टा नयनानन्द–भाजनम्।।१५५।।
वसुदेव–सुखाब्धिश्च देवकी–नयनामृतम् ।।
पितृ–मातृस्तुतः पूर्वह्नसर्ववृत्तान्त–बोधकः।।१५६।।
गोकुलागति–लीलाप्तह्नवसुदेव–कर–स्थितिः ।।
सर्वेशत्व–प्रकटनः माया–व्यत्यय–कारकः।।१५७।।
ज्ञान–मोहित–दुष्टेशः प्रपञ्चास्मृति–कारणम् ।।
यशोदा–नन्दनो नन्दह्नभाग्य–भू–गोकुलोत्सवः।।१५८।।
नन्दप्रियो नन्दसूनुः यशोदायाः स्तनन्धयः ।।
पूतना–सुपयः–पाता मुग्ध–भावाति–सुन्दरः।।१५९।।
सुन्दरी–हृदयानन्दो गोपी–मन्त्राभिमन्त्रितः ।।
गोपालाश्चर्यरसकृत् शकटासुर–खण्डनः।।१६०।।
नन्द–व्रज–जनानन्दी नन्द–भाग्य–महोदयः ।।
तृणावर्त–वधोत्साहो यशोदा–ज्ञान–विग्रहः।।१६१।।
बलभद्र–प्रियः कृष्णः सङ्कर्षण–सहायवान् ।।

रामानुजो वासुदेवः गोष्ठाङ्गण–गति–प्रियः।।१६२।।
किङ्किणी–रव–भावज्ञो वत्स–पुच्छावलम्बनः ।।
नवनीत–प्रियो गोपीह्नमोह–संसार–नाशकः।।१६३।।
गोप–बालक–भाव–ज्ञः चौर्य–विद्या–विशारदः ।।
मृत्स्नाभक्षण–लीलास्य–माहात्म्यज्ञानदायकः ।।१६४।।
धरा–द्रोण–प्रीति–कर्ता दधि–भाण्ड–विभेदनः ।।
दामोदरो भक्तवश्यो यमलार्जुन–भञ्जनः।।१६५।।
बृहद्वन–महाश्चर्यः वृन्दावन–गति–प्रियः ।।
वत्सघाती बालकेलिः बकासुर–निषूदनः।।१६६।।
अरण्य–भोक्ताप्यथवा बाल–लीला–परायणः ।।
प्रोत्साह–जनकश्चैवम् अघासुर–निषूदनः।।१६७।।
व्याल–मोक्ष–प्रदः पुष्टो ब्रह्म–मोह–प्रवर्धनः ।।
अनन्तमूर्तिः सर्वात्मा जङ्गम–स्थावराकृतिः।।१६८।।
ब्रह्म–मोहन–कर्ता च स्तुत्य आत्मा सदाप्रियः ।।
पौगण्ड–लीलाभिरतिः गोचारण–परायणः।।१६९।।
वृन्दावन–लता–गुल्मह्नवृक्ष–रूप–निरूपकः ।।
नाद–ब्रह्म–प्रकटनो वयः–प्रतिकृति–स्वनः।।१७०।।
बर्हि–नृत्यानुकरणो गोपालानुकृति–स्वनः ।।
सदाचार–प्रतिष्ठाता बलश्रम–निराकृतिः।।१७१।।
तरुमूल–कृता–ऽशेषह्नतल्प–शायी सखि–स्तुतः ।।

गोपाल–सेवित–पदः श्रीलालित–पदाम्बुजः।।१७२।।
गोप–सम्प्रार्थित–फलह्नदान–नाशित–धेनुकः ।।
कालीय–फणि–माणिक्यह्नरंजितश्रीपदाम्बुजः।।१७३।।
दृष्टि–सञ्जीविताशेषह्नगोप–गो–गोपिका–प्रियः ।।
लीलासम्पीत–दावाग्निः प्रलम्बवध–पण्डितः।।१७४।।
दावाग्न्यावृत–गोपालह्नदृष्ट्याच्छादन–वह्निपः ।।
वर्षा–शरद्–विभूति–श्रीः गोपीकामप्रबोधकः।।१७५।।
गोपी–रत्न–स्तुता–ऽशेषह्नवेणु–वाद्य–विशारदः ।।
कात्यायनी–व्रत–व्याजह्नसर्व–भावाश्रिताङ्गनः।।१७६।।
सत्सङ्गति–स्तुति–व्याजह्नस्तुत–वृन्दावनांघ्रिपः ।।
गोपक्षुच्छान्ति–संव्याजह्नविप्रभार्या–प्रसादकृत्।।१७७।।
हेतु–प्राप्तेन्द्र–यागस्वह्नकार्य–गोसव–बोधकः ।।
शैल–रूप–कृता–ऽशेषह्नरस–भोग–सुखावहः।।१७८।।
लीला–गोवर्धनोद्धारह्नपालित–स्व–व्रजप्रियः ।।
गोप–स्वच्छन्दलीलार्थह्नगर्गवाक्यार्थबोधकः।।१७९।।
इन्द्र–धेनु–स्तुति–प्राप्तह्नगोविन्देन्द्राभिधानवान् ।।
व्रतादि–धर्म–संसक्तह्ननन्दक्लेश–विनाशकः।।१८०।।
नन्दादि–गोपमात्रेष्टह्नवैकुण्ठ–गति–दायकः ।।
वेणुवाद–स्मर–क्षोभह्नमत्त–गोपी–विमुक्तिदः।।१८१।।
सर्व–भाव–प्राप्त–गोपीह्नसुख–संवर्धन–क्षमः ।।

---

११६ केवल सेवा : सेवा-कथा दोनों न हो पाये तो स्वगृहमें सेवा करनी चाहिये.

गोपी–गर्व–प्रणाशार्थह्लतिरोधान–सुख–प्रदः ।।१८२।।
कृष्ण–भाव–व्याप्त–विश्वह्लगोपी–भावित–वेषधृक् ।।
राधा–विशेष–सम्भोगह्लप्राप्त–दोष–निवारकः।।१८३।।
परम–प्रीति–सङ्गीतह्लसर्वाद्भुत–महागुणः ।।
मानापनोदनाक्रन्दह्लगोपी–दृष्टि–महोत्सवः।।१८४।।
गोपिका–व्याप्त–सर्वाङ्गः स्त्री–सम्भाषा–विशारदः ।।
रासोत्सव–महासौख्यह्लगोपी–सम्भोग–सागरः।।१८५।।
जल–स्थल–रति–व्याप्तह्लगोपी–दृष्ट्यभिपूजितः ।।
शास्त्रानपेक्ष–कामैकह्लमुक्ति–द्वार–विवर्धनः।।१८६।।
सुदर्शन–महासर्पह्लग्रस्त–नन्द–विमोचकः ।।
गीत–मोहित–गोपीधृक्ह्लशंख चूड–विनाशकः ।।१८७।।
गुण–सङ्गीत–सन्तुष्टिः गोपी–संसार–विस्मृतिः ।।
अरिष्ट–मथनो दैत्यह्लबुद्धि–व्यामोह–कारकः।।१८८।।
केशीघाती नारदेष्टः व्योमासुर–विनाशकः ।।
अक्रूर–भक्ति–संराद्धह्लपादरेणु–महानिधिः।।१८९।।
रथावरोह–शुद्धात्मा गोपी–मानस–हारकः ।।
हृद–सन्दर्शिताऽशेष–वैकुण्ठाक्रूर–संस्तुतः।।१९०।।
मथुरा–गमनोत्साहः मथुरा–भाग्य–भाजनम् ।।
मथुरा–नगरी–शोभा–दर्शनोत्सुक–मानसः।।१९१।।
दुष्ट–रञ्जक–घाती च वायकार्चित–विग्रहः ।।

वस्त्र–माला–सुशोभाङ्गः कुब्जा–लेपन–भूषितः।।१९२।।
कुब्जा–सुरूप–कर्ता च कुब्जा–रति–वर–प्रदः ।।
प्रसादरूप–सन्तुष्ट–हर–कोदण्ड–खण्डनः।।१९३।।
शकलाहत–कंसाप्त–धनू–रक्षक–सैनिकः ।।
जाग्रत्–स्वप्न–भयव्याप्त–मृत्युलक्षण–बोधकः।।१९४।।
मथुरा–मल्ल ओजस्वी मल्ल–युद्ध–विशारदः ।।
सद्यः कुवलयापीड–घाती चाणूर–मर्दनः।।१९५।।
लीला–हत–महामल्लः शल–तोशल–घातकः ।।
कंसान्तको जितामित्रो वसुदेव–विमोचकः।।१९६।।
ज्ञात–तत्त्व–पितृज्ञान–मोहनामृत–वाङ्मयः ।।
उग्रसेन–प्रतिष्ठाता यादवाधि–विनाशकः।।१९७।।
नन्दादि–सान्त्वन–करः ब्रह्मचर्य–व्रते स्थितः ।।
गुरु–शुश्रूषण–परः विद्या–पारमितेश्वरः।।१९८।।
सान्दीपनि–मृतापत्य–दाता कालान्तकादि–जित् ।।
गोकुलाश्वासन–परः यशोदा–नन्द–पोषकः।।१९९।।
गोपिका–विरह–व्याज–मनो–गति–रति–प्रदः ।।
समोद्धव–भ्रमरवाक् गोपिका–मोह–नाशकः।।२००।।
कुब्जा–रति–प्रदोऽक्रूर–पवित्रीकृत–भू–गृहः ।।
पृथा–दुःख–प्रणेता च पाण्डवानां सुखप्रदः।।२०१।।

जरासन्ध–समानीत–सैन्य–घाती विचारकः ।।
यवन–व्याप्त–मथुरा–जन–दत्त–कुशस्थलिः।।२०२।।
द्वारकाद्भुत–निर्माण–विस्मापित–सुरासुरः ।।
मनुष्य–मात्र–भोगार्थ–भूम्यानीतेन्द्र–वैभवः।।२०३।।
यवन–व्याप्त–मथुरा–निर्गमानन्द–विग्रहः ।।
मुचुकुन्द–महाबोध–यवन–प्राण–दर्प–हा।।२०४।।
मुचुकुन्द–स्तुताऽशेष–गुण–कर्म–महोदयः ।।
फल–प्रदान–सन्तुष्टिः जन्मान्तरित–मोक्ष–दः।।२०५।।
शिव–ब्रह्मण–वाक्याप्त–जय–भीति–विभावनः ।।
प्रवर्षण–प्रार्थिताग्नि–दान–पुण्य–महोत्सवः।।२०६।।
रुक्मिणी–रमणः काम–पिता प्रद्युम्न–भावनः ।।
स्यमन्तकमणि–व्याज–प्राप्त–जाम्बवतीपतिः।।२०७।।
सत्यभामा–प्राणपतिः कालिन्दी–रति–वर्धनः ।।
मित्रविन्दा–पतिः सत्या–पतिः वृष–निषूदनः।।२०८।।
भद्रा–वाञ्छित–भर्ता च लक्ष्मणा–वरण–क्षमः ।।
इन्द्रादि–प्रार्थित–वध–नरकासुर–सूदनः।।२०९।।
मुरारिः पीठहन्ता च ताम्रादि–प्राण–हारकः ।।
षोडश–स्त्री–सहस्रेशः छत्र–कुण्डल–दानकृत्।।२१०।।
पारिजातापहरणः देवेन्द्र–मद–नाशकः ।।

पर्यटन : कोई साधन हो न पाता हो तो कृष्णतत्पर हो कर तीर्थाटन करते रहें.

रुक्मिणी–सम–सर्वस्त्री–साध्यभोग–रतिप्रदः।।२११।।
रुक्मिणी–परिहासोक्ति–वाक्तिरोधान–कारकः ।।
पुत्र–पौत्र–महाभाग्य–गृह–धर्म–प्रवर्तकः।।२१२।।
शम्बरान्तक–सत्पुत्र–विवाह–हत–रुक्मिकः ।।
उषापहृत–पौत्र–श्रीः बाण–बाहु–निवारकः।।२१३।।
शीत–ज्वर–भय–व्याप्त–ज्वर–संस्तुत–षड्गुणः ।।
शङ्कर–प्रतियोद्धा च द्वन्द्व–युद्ध–विशारदः।।२१४।।
नृग–पाप–प्रभेत्ता च ब्रह्मस्व–गुण–दोष–दृक् ।।
विष्णुभक्ति–विरोधैक–ब्रह्मस्व–विनिवारकः।।२१५।।
बलभद्राहित–गुणः गोकुल–प्रीति–दायकः ।।
गोपीस्नेहैक–निलयः गोपी–प्राण–स्थितिप्रदः।।२१६।।
वाक्यातिगामि–यमुना–हलाकर्षण–वैभवः ।।
पौण्ड्रक–त्याजितस्पर्धः काशीराज–विभेदनः।।२१७।।
काशी–निदाह–करणः शिव–भस्म–प्रदायकः ।।
द्विविद–प्राण–घाती च कौरवाखर्व–गर्व–नुत्।।२१८।।
लाङ्गलाकृष्ट–नगरी–संविग्नाऽखिल–नागरः ।।
प्रपन्नाभयदः साम्ब–प्राप्त–सन्मान–भाजनम्।।२१९।।
नारदाविष्ट–चरणः भक्त–विक्षेप–नाशकः ।।
सदाचारैक–निलयः सुधर्माध्यासितासनः।।२२०।।
जरासन्धावरुद्धेन विज्ञापित–निज–क्लमः ।।

मन्त्र्युद्धवादि–वाक्योक्त–प्रकारैक–परायणः।।२२१।।
राजसूयादि–मख–कृत् सम्प्रार्थित–सहाय–कृत् ।।
इन्द्रप्रस्थ–प्रयाणार्थ–महत्सम्भार–सम्भृतिः।।२२२।।
जरासन्ध–वध–व्याज–मोचिता–ऽशेष–भूमिपः ।।
सन्मार्ग–बोधको यज्ञ–क्षिति–वारण–तत्परः।।२२३।।
शिशुपाल–हति–व्याज–जय–शाप–विमोचकः ।।
दुर्योधनाभिमानाब्धि–शोष–बाण–वृकोदरः।।२२४।।
महादेव–वर–प्राप्त–पुर–शाल्व–विनाशकः ।।
दन्तवक्त्र–वध–व्याज–विजयाघौघ–नाशकः।।२२५।।
विदूरथ–प्राण–हर्ता न्यस्त–शस्त्रास्त्र–विग्रहः ।।
उपधर्म–विलिप्ताङ्ग–सूत–घाती वर–प्रदः।।२२६।।
बल्वल–प्राण–हरण–पालितर्षि–श्रुति–क्रियः ।।
सर्व–तीर्थाघ–नाशार्थ–तीर्थ–यात्रा–विशारदः।।२२७।।
ज्ञान–क्रिया–विभेदेष्ट–फल–साधन–तत्परः ।।
सारथ्यादि–क्रियाकर्ता भक्त–वश्यत्वबोधकः।।२२८।।
सुदामा(म?)–रङ्क–भार्यार्थ–भूम्यानीतेन्द्र–वैभवः ।।
रवि–ग्रह–निमित्ताप्त–कुरुक्षेत्रैक–पावनः।।२२९।।
नृप–गोपी–समस्त–स्त्री–पावनार्थाखिल–क्रियः ।।
ऋषि–मार्ग–प्रतिष्ठाता वसुदेव–मख–क्रियः।।२३०।।
वसुदेव–ज्ञान–दाता देवकी–पुत्र–दायकः ।।

तीर्थयात्रीका तीर्थक्षेत्रमें दान-भेंट लेना तीर्थका विक्रय करने समान पाप है.

अर्जुन–स्त्री–प्रदाता च बहुलाश्व–स्वरूप–दः।।२३१।।
श्रुतदेवेष्ट–दाता च सर्व–श्रुति–निरूपितः ।।
महादेवाद्यतिश्रेष्ठो भक्ति–लक्षण–निर्णयः।।२३२।।
वृक–ग्रस्त–शिव–त्राता नाना–वाक्य–विशारदः ।।
नर–गर्व–विनाशार्थ–हृत–ब्राह्मण–बालकः।।२३३।।
लोकालोक–परस्थान–स्थित–बालक–दायकः ।।
द्वारकास्थ–महाभोग–नाना–स्त्री–रति–वर्धनः।।२३४।।
मनस्तिरोधान–कृत–व्यग्र–स्त्री–चित्त–भावितः ।।

एकादशस्कन्धनामानि–मुक्ति लीला

मुक्तिलीला–विहरणः मौशल–व्याज–संहृतिः।।२३५।।
श्रीभागवत–धर्मादि–बोधको भक्ति–नीति–कृत् ।।
उद्धव–ज्ञान–दाता च पञ्चविंशतिधा गुरुः।।२३६।।
आचार–भक्ति–मुक्त्यादि–वक्ता शब्दोद्भव–स्थितिः।।
हंसो धर्म–प्रवक्ता च सनकाद्युपदेश–कृत्।।२३७।।
भक्ति–साधन–वक्ता च योग–सिद्धि–प्रदायकः ।।
नाना–विभूति–वक्ता च शुद्ध–धर्मावबोधकः।।२३८।।
मार्गत्रय–विभेदात्मा नाना–शङ्का–निवारकः ।।
भिक्षुगीता–प्रवक्ता च शुद्ध–सांख्य–प्रवर्तकः।।२३९।।
मनो–गुण–विशेषात्मा ज्ञापकोक्त–पुरूरवाः ।।
पूजाविधि–प्रवक्ता च सर्व–सिद्धान्त–बोधकः।।२४०।।

लघु–स्वमार्ग–वक्ता च स्वस्थान–गति–बोधकः ।।
यादवाङ्गोपसंहर्ता सर्वाश्चर्य–गति–क्रियः।।२४१।।

द्वादशस्कन्धनामानि–आश्रय लीला

काल–धर्म–विभेदार्थ–वर्ण–नाशन–तत्परः ।।
बुद्धो गुप्तार्थ–वक्ता च नानाशास्त्र–विधायकः।।२४२।।
नष्ट–धर्म–मनुष्यादि–लक्षण–ज्ञापनोत्सुकः ।।
आश्रयैक–गति–ज्ञाता कल्किः कलिमलापहः।।२४३।।
शास्त्र–वैराग्य–सम्बोधः नाना–प्रलय–बोधकः ।।
विशेषतः शुकव्याज–परीक्षिज्ज्ञान–बोधकः।।२४४।।
शुकेष्ट–गति–रूपात्मा परीक्षिद्–देह–मोक्षदः ।।
शब्दरूपो नादरूपो वेदरूपो विभेदनः।।२४५।।
व्यासः शाखा–प्रवक्ता च पुराणार्थ–प्रवर्तकः ।।
मार्कण्डेय–प्रसन्नात्मा वट–पत्र–पुटे–शयः।।२४६।।
माया–व्याप्त–महामोह–दुःख–शान्ति–प्रवर्तकः ।।
महादेव–स्वरूपश्च भक्तिदाता कृपानिधिः।।२४७।।
आदित्यान्तर्गतः कालः द्वादशात्मा सुपूजितः ।।
श्रीभागवतरूपश्च सर्वार्थ–फल–दायकः।।२४८।।

इतीदं कीर्तनीयस्य हरेर् नाम–सहस्रकम् ।।
पञ्चसप्तति–विस्तीर्णं पुराणान्तर–भाषितम्।।२४९।।

य एतत् प्रातरुत्थाय श्रद्धावान् सुसमाहितः ।।
जपेद् अर्थाहितमतिः स गोविन्दपदं लभेत्।।२५०।।
सर्व–धर्म–विनिर्मुक्तः सर्व–साधन–वर्जितः ।।
एतद्–धारण–मात्रेण कृष्णस्य पदवीं व्रजेत्।।२५१।।
हर्यावेशित–चित्तेन श्रीभागवत–सागरात् ।।
समुद्धृतानि नामानि चिन्तामणि–निभानि हि।।२५२।।
कण्ठस्थितान्यर्थदीप्त्या बाधन्ते–ऽज्ञानजं तमः ।।
भक्तिं श्रीकृष्णदेवस्य साधयन्ति विनिश्चितम्।।२५३।।
किं बहूक्तेन भगवान् नामभिः स्तुत–षड्गुणः ।।
आत्मभावं नयत्याशु भक्तिं च कुरुते दृढाम्।।२५४।।
यः कृष्णभक्तिमिह वाञ्छति साधनौघैः
नामानि भासुरयशांसि जपेत् स नित्यम् ।।
तं वै हरिः स्वपुरुषं कुरुतेतिशीघ्रम्
आत्मार्पणं समधिगच्छति भावतुष्टः।।२५५।।
श्रीकृष्ण कृष्णसख वृष्णि–वृषावनिधृक्–
राजन्यवंश दहनानपवर्ग–वीर्य ।।
गोविन्द गोप–वनिता–व्रज–भृत्यगीत
तीर्थश्रवः श्रवणमङ्गल पाहि भृत्यान्।।२५६।।

।।इति श्रीभागवतसारसमुच्चये वैश्वानरोक्तं
श्रीपुरुषोत्तमसहस्रनामस्तोत्रं सम्पूर्णम्।।

।। त्रिविधनामावली ।।

श्रीकृष्णाय नमः।।१।।
नराकृतये नमः।।२।।
परब्रह्मणे नमः।।३।।
यदु–कुल–चूडामणये नमः।।४।।
वसुदेव–नन्दनाय नमः।।५।।
भूमि–क्लेश–भार–हाराय नमः।।६।।
पुण्य–श्रवण–कीर्तनाय नमः।।७।।
कलिमल–संहति–कलन–यशःपुञ्जाय नमः।।८।।
भक्ति–मार्ग–प्रवर्तकाय नमः।।९।।
भक्त–जन–कल्प–वृक्षाय नमः।।१०।।
देवकी–नन्दनाय नमः।।११।।
वसुदेव–देवकी–पुण्य–पुञ्ज–फलाय नमः।।१२।।
देवकी–मनः–प्रमोद–जनकाय नमः।।१३।।
ब्रह्मादि–भक्त–वाक्य–परिपालकाय नमः।।१४।।
शेषादि–भक्त–सेवित–चरणाय नमः।।१५।।
कालिन्दी–वेग–हर्त्रे नमः।।१६।।
योग–मायाधिपतये नमः।।१७।।
गोकुलपतये नमः।।१८।।
गोपीजन–वल्लभाय नमः।।१९।।

गोकुलोत्सवाय नमः।।२०।।
अखिलाशा–पूरकाय नमः।।२१।।
यशोदा–स्तनन्धयाय नमः।।२२।।
नन्द–मनो–मोदकाय नमः।।२३।।
पूतनान्तकाय नमः।।२४।।
सुकृतज्ञाय नमः।।२५।।
पूतनामोक्षदात्रे नमः।।२६।।
भक्त–मनो–रोधकाय नमः।।२७।।
गोकुलाभयदान–चरित्राय नमः।।२८।।
भक्त–प्रपञ्च–विस्मारकाय नमः।।२९।।
शकट–भेदन–बाल–चरित्राय नमः।।३०।।
तृणावर्त–विमर्दकाय नमः।।३१।।
भक्ति–स्वासक्ति–जनकाय नमः।।३२।।
यशोदा–मोह–नाशकाय नमः।।३३।।
रामानुजाय नमः।।३४।।
कृष्णाय नमः।।३५।।
वासुदेवाय नमः।।३६।।
अनन्त–गुण–गम्भीराय नमः।।३७।।
अद्भुत–कर्मणे नमः।।३८।।
गोकुल–चिन्तामणये नमः।।३९।।

गोप–गोकुल–नन्दनाय नमः।।४०।।
भक्त–सर्व–दुःख–निवारकाय नमः।।४१।।
महानुभावाय नमः।।४२।।
अचिन्त्य–गुण–कर्मणे नमः।।४३।।
नारायणाय नमः।।४४।।
व्रजाङ्गण–रिङ्गण–जानु–चरणारविन्दाय नमः।।४५।।
व्रज–पङ्काङ्ग–लेपनाय नमः।।४६।।
भक्त–परीक्षा–परिपालकाय नमः।।४७।।
व्रज–हीरमणये नमः।।४८।।
गोकुल–धूर्त–चरित्राय नमः।।४९।।
भक्त–वशीकरण–चरित्राय नमः।।५०।।
नवनीत–लवाहाराय नमः।।५१।।
दधि–दुग्ध–प्रियाय नमः।।५२।।
क्षीर–कणावलीढ–मुखारविन्दाय नमः।।५३।।
मृत्स्नाभक्षण–भीत–यशोदा–ताडन–सन्त्रास–नयनारविन्दाय नमः।।५४।।
सर्वविमोहकाय नमः।।५५।।
माहात्म्य–प्रदर्शकाय नमः।।५६।।
परब्रह्मत्व–बोधकाय नमः।।५७।।
सर्वजनीन–माहात्म्याय नमः।।५८।।

दधि–भाण्ड–भेत्त्रे नमः।।५९।।

चौर्य–विशंकितेक्षणाय नमः।।६०।।

भक्ताधीनाय नमः।।६१।।

दामोदराय नमः।।६२।।

यमलार्जुन–भञ्जनाय नमः।।६३।।

भक्त–वाक्य–परिपूरकाय नमः।।६४।।

भक्तिदात्रे नमः।।६५।।

सर्वेश्वराय नमः।।६६।।

सर्वाय नमः।।६७।।

नन्द–विमोचित–बन्धनाय नमः।।६८।।

उपनन्दप्रियाय नमः।।६९।।

मातृरुत्सङ्ग–गताय नमः।।७०।।

वृन्दावन–क्रीडा–रताय नमः।।७१।।

वत्स–वाट–चराय नमः।।७२।।

वत्सासुर–हन्त्रे नमः।।७३।।

बक–विदारणाय नमः।।७४।।

वृन्दावन–चारिणे नमः।।७५।।

धेनुकासुर–खण्डनाय नमः।।७६।।

उत्ताल–ताल–भेत्त्रे नमः।।७७।।

सर्व–प्राणि–सुख–सञ्चार–कर्त्रे नमः।।७८।।

गोकुल–सुख–वासाय नमः।।७९।।
गोरजःच्छुरित–कुन्तलाय नमः।।८०।।
वेणुवाद–विशारदाय नमः।।८१।।
वन–कुसुमावली–रचिताकल्पाय नमः।।८२।।
अनुग–गीयमान–यशःपुञ्जाय नमः।।८३।।
गोपी–ताप–हारकाय नमः।।८४।।
गोपी–नयनारविन्दार्चिताय नमः।।८५।।
लौकिक–लीला–प्रदर्शकाय नमः।।८६।।
विषमूर्च्छित–गो–गोपाल–जीवनदृष्टये नमः।।८७।।
भक्त–परीक्षकाय नमः।।८८।।
कालियफणिमाणिक्यरञ्जितश्रीपदाम्बुजाय नमः।।८९।
नागपत्नी–समर्चिताय नमः।।९०।।
भक्ताश्रय–जल–स्थल–विशोधकाय नमः।।९१।।
नानाविध–क्रीडा–रताय नमः।।९२।।
प्रलम्ब–घातकाय नमः।।९३।।
दावाग्नि–पतित–गोकुल–रक्षकाय नमः।।९४।।
अग्निमुखाय नमः।।९५।।
सर्वर्तु–क्रीडा–विलासाय नमः।।९६।।
गोकुल–चारु–विचित्र–चरित्राय नमः।।९७।।
गोपिका–धैर्य–विमोचक–वेणुनादाय नमः।।९८।।

यमुनाजलकी लोटीजीकी न्योछावर देनी और लेनी दोनों मांके दूधको बेचने समान है

गोपिका–नयन–पानैक–पात्राय नमः।।९९।।

श्रुतिरूप–गोपिकावर्णित–निखिलगुणाय नमः।।१००।

गोपकन्या–व्रत–फलाय नमः।।१०१।।

जलक्रीडासमासक्त–गोपीवस्त्रापहारकाय नमः।।१०२।

मुक्तोपसर्पकाय नमः।।१०३।।

वृन्दावन–बोधकाय नमः।।१०४।।

यज्ञभोक्त्रे नमः।।१०५।।

यज्ञ–भाग–भुजे नमः:।।१०६।।

धर्म–रक्षकाय नमः।।१०७।।

यज्ञपत्नी–प्रसादकाय नमः।।१०८।।

सर्वाज्ञान–निवारकाय नमः।।१०९।।

इति बाल–चरित्रस्य नाम्नाम् अष्टोत्तरं शतम् ।
कृष्णभक्ति–हृदानन्दि कीर्तनाद् भक्ति–बोधकम् ।।

।।इति बाललीला नामावली।।

।। अथ प्रौढलीलानामानि ।।

नामान्यथ प्रवक्ष्यामि यैः सन्तुष्यति केशवः ।
वक्ष्यामि भक्त–हृदये परमानन्द–दायकः।।

अद्भुत–बालकाय नमः।।१।।

अम्बुजेक्षणाय नमः।।२।।

चतुर्भुजात्त–चक्रासिगदाशङ्खाद्युदायुधाय नमः।।३।।
श्रीवत्स–लक्ष्मणे नमः।।४।।
कौस्तुभाभरण–ग्रीवाय नमः।।५।।
पीताम्बर–धारिणे नमः।।६।।
नील–मेघ–श्यामाय नमः।।७।।
नाना–कल्प–विराजिताय नमः।।८।।
आत्मविस्मापक–मानुषवेष–सौन्दर्य–निधये नमः।।९।।
रमा–लालित–पाद–पद्माय नमः।।१०।।
भक्त–हितोपदेशकाय नमः।।११।।
हविर्मन्त्र–देवता–मूल–बोधकाय नमः।।१२।।
कृत–वेष–मोहित–देव–परीक्षकाय नमः।।१३।।
एकदेश–वृष्टि–वायुदेवता–क्षोभजनकाय नमः।।१४।।
सर्वरूपाय नमः।।१५।।
वेदमार्ग–रक्षकाय नमः।।१६।।
भक्तिमार्ग–प्रवर्तकाय नमः।।१७।।
गोवर्धनोद्धरण–धीराय नमः।।१८।।
सर्वजनीन–माहात्म्य–बोधकाय नमः।।१९।।
भक्त–विस्मापकाय नमः।।२०।।
मोहन–प्रबोधोभय–रक्षकाद्भुत–चरित्राय नमः।।२१।।
लोक–वेदोल्लङ्घनकर–प्रपन्नभक्त–सर्वदुःख–

निवारकाय नमः।।२२।।

इन्द्र–सुरभी–प्रसादकाय नमः।।२३।।

गोविन्दाय नमः।।२४।।

अत्यन्त–भक्त–निरोधकाय नमः।।२५।।

वरुणादि–देव–प्रबोधकाये नमः।।२६।।

व्यापि–वैकुण्ठ–प्रदर्शकाय नमः।।२७।।

मदनगोपालाय नमः।।२९।।

अनादि–ब्रह्मचारिणे नमः।।३०।।

कन्दर्प–कोटि–लावण्याय नमः।।३१।।

सर्वोपनिषत्–तात्पर्य–गोचराय नमः।।३२।।

गोपिका–रमणाय नमः।।३३।।

सकल–योगाधिपतये नमः।।३४।।

अलौकिक–पूर्ण–काम–जनकाय नमः।।३५।।

आशा–पूरक–सत्यात्मकाम–दीपकाय नमः।।३६।।

शृङ्गार–विभावादि–युक्ताय नमः।।३७।।

सत्यवाचे नमः।।३८।।

कामोन्मत्त–गोपाङ्गना–मुक्ति–दात्रे नमः।।३९।।

मुक्त्यधिक–फल–गोपी–मनो–मोहकाय नमः।।४०।।

लोकवेद–सर्वधर्म–परित्यक्त–गोपीसेवित–
चरणारविन्दाय नमः।।४१।।

---

१३२ पुष्टिभक्त प्रभुसेवाको मोक्ष-स्वर्गसे भी अधिक साक्षात् फलरूप मानता है.

भक्त–प्रतिबन्ध–निवारकाय नमः।।४२।।
अलब्ध–रास–गोपी–सद्योमुक्तिप्रदायकाय नमः।।४३।
परीक्षित–गोपवधू–सेवित–चरणाय नमः।।४४।।
निजजन–स्मय–ध्वंसन–स्मिताय नमः।।४५।।
कायिक–तिरोभावित–गोपी–पुञ्जाय नमः।।४६।।
राधा–सहचराय नमः।।४७।।
विरहव्याकुल–गोपाङ्गनान्वेषित–मार्गाय नमः।।४८।।
ज्ञान–तुल्य–भक्त–भ्रान्ति–जनकाय नमः।।४९।।
निकट–स्थिति–बोधकाय नमः।।५०।।
गोपी–वर्णित–निखिल–गुणाय नमः।।५१।।
भक्त–शुद्धि–विलम्बनाय नमः।।५२।।
दीन–कृपा–प्रकटित–रूपाय नमः।।५३।।
सर्व–मनो–नयनाह्लादकाय नमः।।५४।।
गोपिका–वाक्य–विचारकाय नमः।।५५।।
सर्वधर्म–निर्धारकाय नमः।।५६।।
सर्वरसाभिज्ञाय नमः।।५७।।
रासमण्डलाऽनेकरूपाय नमः।।५८।।
उद्दीप्त–कामरस–पूरकाय नमः।।५९।।
अतिक्रान्त–मर्यादाय नमः।।६०।।
भक्तदैन्य–निवारकाय नमः।।६१।।

भगवत्सेवामें प्रतिबन्धक न हों वहां तक ही परोपकारादि कार्य करने चाहियें.

यमुना–कीर्ति–जनकाय नमः।।६२।।
सुदर्शन–मोचकाय नमः।।६३।।
बलदेवाभीष्ट–दात्रे नमः।।६४।।
शङ्खचूड–घातकाय नमः।।६५।।
गोपीक्लेश–नाशक–गुणार्णवाय नमः।।६६।।
स्वसमान–गुणाय नमः।।६७।।
सर्ववशीकरण–द्वादशविध–चरित्राय नमः।।६८।।
नारदादि–बोधिताक्लिष्ट–कर्मणे नमः।।७०।।
दुष्ट–दुर्बुद्धि–नाश–हेतवे नमः।।७१।।
शिष्ट–ज्ञानदीपकाय नमः।।७२।।
केश्यादि–महादुष्ट–निबर्हणाय नमः।।७३।।
नारदादि–वन्दित–चरणाय नमः।।७४।।
व्योमादि–दुष्ट–पीडित–गोपगोपीरक्षकाय नमः।।७५।।
सद्भक्तिहेतवे नमः।।७६।।
अक्रूरादि–भक्त–मनोरथ–परिपूरकाय नमः।।७७।।
नन्दादि–गोप–मथुरागमनोत्सव–हेतवे नमः।।७८।।
भक्तदुःख–मूलोच्छेदकाय नमः।।७९।।
गोपिका–मनःकार्पण्य–शील–हेतवे नमः।।८०।।
गोपिका–विरह–नाशक–वाक्य–पुञ्जाय नमः।।८१।।
भक्त–संशयच्छेदकाय नमः।।८२।।

जो स्वाथकी पूर्तिकेलिये प्रभुका भजन करता है वह अधम है.

व्यापिवैकुण्ठ–वासिने नमः।।८३।।

अक्रूरादि–भक्तस्तुतानन्त–गुणाय नमः।।८४।।

सत्यप्रतिज्ञाय नमः।।८५।।

स्वगुण–प्रतिबोधकाय नमः।।८६।।

मथुरा–दर्शनोत्सुकाय नमः।।८७।।

स्वाधार–वैकुण्ठ–स्थापकाय नमः।।८८।।

पौर–पुरन्ध्री–पुण्य–जनकाय नमः।।८९।।

रजकादि–दुष्ट–नाशकाय नमः।।९०।।

वस्त्राद्यनेकाकल्प–भूषित–रूपाय नमः।।९१।।

वायक–सुदाम–भक्तालङ्कृताय नमः।।९२।।

अत्युदाराय नमः।।९३।।

कुब्जानुलेपालङ्कृताय नमः।।९४।।

कुब्जादि–भक्त–सहज–दोष–दूरीकरणाय नमः।।९५।।

स्वलीलौपयिक–रूपाभिव्यञ्जकाय नमः।।९६।।

मथुरा–महोत्सवाय नमः।।९७।।

दैत्यधर्म–निवारकाय नमः।।९८।।

धनुर्भङ्ग–बोधित–कालाय नमः।।९९।।

अतिसामर्थ्यबोधिताक्लिष्ट–कर्मचरित्राय नमः।।१००।।

मृत्युधर्म–बोधकाय नमः।।१०१।।

कुवलयापीड–घातकाय नमः।।१०२।।

गजदन्त–वरायुधाय नमः।।१०३।।

निखिलजन–मनो–नयनाह्लादकाय नमः।।१०४।।

सर्वरसाविर्भावकाय नमः।।१०५।।

निखिल–कामिनी–प्रेमावलोकिताय नमः।।१०६।।

चाणूरादि–महामल्लदैत्यगर्व–निबर्हणाय नमः।।१०७।।

कंसघातकाय नमः।।१०८।।

वसुदेव–देवकी–दुःख–विदारकाय नमः।।१०९।।

यदुकुल–नलिनी–विकाशकाय नमः।।११०।।

कालदुःख–निवारकाय नमः।।१११।।

प्रदर्शित–सदाचाराय नमः।।११२।।

सान्दीपनि–मृतापत्य–दात्रे नमः।।११३।।

नन्दादि–ज्ञानबोधकाय नमः।।११४।।

यशोदा–स्नेह–रक्षकाय नमः।।११५।।

गोपिकादि–लौकिकभावदोषदूरीकरणाय नमः।।११६।।

उद्धवादि–मध्यमभाव–बोधकाय नमः।।११७।।

स्वनिष्ठ–मनोदोष–नाशकाय नमः।।११८।।

कुब्जादि–मनोरथ–पूरकाय नमः।।११९।।

अक्रूरादि–भक्त–सन्मान–हेतवे नमः।।१२०।।

भक्त–हित–चिन्तकाय नमः।।१२१।।

पाण्डव–स्थापकाय नमः।।१२२।।

प्रभुसेवा-स्मरणादिमें पुष्टिजीवकी प्रवृत्ति सहज होती है, अन्यत्र असहज.

कुन्ती–प्रीति–हेतवे नमः।।१२३।।
प्रौढ–लीलावबोधकाय नमः।।१२४।।
भक्तपक्ष–बोधकाय नमः।।१२५।।
धृतराष्ट्र–ज्ञान–बोधकाय नमः।।१२६।।
इच्छा–वाद–स्थापकाय नमः।।१२७।।
माया–प्रवर्तकाय नमः।।१२८।।
सर्वाभिवन्दित–चरणारविन्दाय नमः।।१२९।।
एवं श्रीकृष्ण–नामानि प्रौढ–लीलावबोधने ।
कीर्तितान्यति–पुण्यानि शतं विंशतिरष्ट च ।।
।।इति प्रौढलीला नामानि।।

।। अथ राजलीलानामानि ।।

अतः परं प्रवक्ष्यामि राजलीलाम् उपाश्रितः ।
कृतवान् यानि कर्माणि तानि नामानि मुक्तये ।।
क्षात्र–धर्म–प्रवर्तकाय नमः।।१।।
दिव्य–युद्ध–विशारदाय नमः।।२।।
जरासन्ध–समानीत–सैन्य–घातकाय नमः।।३।।
द्वारका–पुर–निर्माण–हेतवे नमः।।४।।
भक्ताचिन्त्य–सुख–दात्रे नमः।।५।।
यवनान्तकाय नमः।।६।।

मुचुकुन्द–प्रसादकाय नम।।७।।
सर्वदेवता–मनोरथ–पूरकाय नमः।।८।।
शिव–ब्राह्मण–वाक्य–परिपालकाय नमः।।९।।
दैत्य–मोहन–चरित्राय नमः।।१०।।
रुक्मिणी–मनोरथ–पूरकाय नमः।।११।।
रुक्मिणी–गान्धर्व–विवाहाय नमः।।१२।।
रुक्मिणी–प्राणपतये नमः।।१३।।
रुक्मि–प्रभृति–दुष्ट–मानस–दुःखदाय नमः।।१४।।
रुक्मिणी–विवाह–प्रदर्शितगृहस्थ–धर्माय नमः।।१५।।
त्रिविध–विवाह–कर्त्रे नमः।।१६।।
काम–जनकाय नमः।।१७।।
शम्बर–घातक–प्रद्युम्नाय नमः।।१८।।
जाम्बवती–प्राणपतये नमः।।१९।।
लोक–निर्मित–सर्वार्थ–ज्ञापकाय नमः।।२०।।
सत्यभामा–वल्लभाय नमः।।२१।।
सत्राजित्–स्वर्ग–हेतवे नमः।।२२।।
स्यमन्तक–मणि–हर्त्रे नमः।।२३।।
शुद्ध–कीर्ति–स्थापकाय नमः।।२४।।
अक्रूरादि–भक्त–दोष–निवारकाय नमः।।२५।।
कालिन्दी–पतये नमः।।२६।।

---

१३८ प्रभुने जिनको छोड़ दिया है वो दुर्भागी जीव भवसागरमें डूब गये हैं.

पाण्डव–राज्य–स्थापकाय नमः।।२७।।

मित्रविन्दा–पतये नमः।।२८।।

सत्या–पतये नमः।।२९।।

भद्रा–पतये नमः।।३०।।

लक्ष्मणा–पतये नमः।।३१।।

रोहीणी–पतये नमः।।३२।।

षोडश–सहस्र–नायिकाधिपतये नमः।।३३।।

मुरारये नमः।।३४।।

नरकान्तकाय नमः।।३५।।

वसुधा–पूजित–चरणाय नमः।।३६।।

सर्वजनीन–सुख–हेतवे नमः।।३७।।

पारिजातापहरणाय नमः।।३८।।

महेन्द्रादि–दुष्टबुद्धि–निवारकाय नमः।।३९।।

सर्वरत्नकोशादि–पूरित–गृहाय नमः।।४०।।

रुक्मिण्यादि–स्त्री–मनःपरीक्षकाय नमः।।४१।।

लौकिक–लीला–वाक्य–विशारदाय नमः।।४२।।

श्रुत्यर्थ–प्रतिपादक–दशदश–पुत्राय नमः।।४३।।

कलिधर्म–प्रतिपादक–वंशादि–कर्त्रे नमः।।४४।।

बाणासुर–बलान्त–कर्त्रे नमः।।४५।।

महादेवादि–सम्मान–हेतवे नमः।।४६।।

ज्वरादि–दोष–नाशकाय नमः।।४७।।
प्रह्लादादि–भक्तवंश–रक्षकाय नमः।।४८।।
दानादिधर्म–बोधकाय नमः।।४९।।
नृग–मोक्ष–हेतवे नमः।।५०।।
ब्रह्मण्याय नमः।।५१।।
पुष्टिमार्ग–प्रवर्तकाय नमः।।५२।।
यमुना–कर्षण–हेतवे नमः।।५३।।
स्पर्धादि–दुष्ट–विमोचकाय नमः।।५४।।
पौण्ड्रक–काशी–राज–हन्त्रे नमः।।५५।।
देवतान्तर–वर–दृप्त–गर्व–नाशकाय नमः।।५६।।
काशी–दाहकाय नमः।।५७।।
दुष्ट–निवास–दोष–नाशकाय नमः।।५८।।
मुक्ति–हेतवे नमः।।५९।।
दुःसङ्ग–दृप्त–द्विविदादि–वध–हेतवे नमः।।६०।।
राज्यादि–दृप्त–कौरव–गर्व–नाशकाय नमः।।६१।।
मर्यादाभक्ति–दृप्त–भक्तमोह–नाशकाय नमः।।६२।।
जीवाधिकार–शास्त्र–गर्व–नाशकाय नमः।।६३।।
सुधर्मालङ्कृत–चरणाय नमः।।६४।।
भक्तापेक्षावभास–हेतवे नमः।।६५।।
उद्धवादि–बुद्ध्यादि–बुद्ध्यनुसारिणे नमः।।६६।।

जीव–धर्मावबोधकाय नमः।।६७।।
हीन–धर्मावलम्बन–जीवकार्य–कर्त्रे नमः।।६८।।
भक्तज्ञान–हेतवे नमः।।६९।।
पुष्टि–निमित्त–ज्ञापकाय नमः।।७०।।
राजसूयादि–प्रवर्तकाय नमः।।७१।।
शिशुपालादि–भक्त–वैकुण्ठप्राप्ति–हेतवे नमः।।७२।।
दुर्योधनादि–दुष्ट–मान–भङ्ग–हेतवे नमः।।७३।।
युधिष्ठिरादि–भक्त–गर्व–नाशकाय नमः।।७४।।
प्रद्युम्नादि–यादव–गर्व–प्रहारकाय नमः।।७५।।
तपस्यादि–दृप्त–शाल्वादि–घातकाय नमः।।७६।।
पुण्यादि–हीन–धर्म–ज्ञापन–हेतवे नमः।।७७।।
मुख्य–सिद्धान्त–प्रवर्तकाय नमः।।७८।।
दन्तवक्त्र–विदूरथादि–मुक्ति–हेतवे नमः।।७९।।
क्षत्रिय–धर्म–नाट्योपसंहारकाय नमः।।८०।।
न्यस्त–शस्त्राय नमः।।८१।।
बलदेव–तीर्थयात्रा–प्रवर्तकाय नमः।।८२।।
सूत–घातकाय नमः।।८३।।
पार्थ–सारथये नमः।।८४।।
अव्यक्त–गीतामृत–महोदधि–प्रवर्तकाय नमः।।८५।।
कौरव–बलान्त–कर्त्रे नमः।।८६।।

इतर–पक्षपात–नाशकाय नमः।।८७।।
सुदामारङ्कभार्यार्थ–भूम्यानीतेन्द्रवैभवाय नमः।।८८।।
हेतुस्थापकाय नमः।।८९।।
देश–कालादि–धर्म–हेत्वनुसारिणे नमः।।९०।।
यात्रोत्सव–प्रवर्तकाय नमः।।९१।।
अखिल–नयनामृताब्धि–पूरकाय नमः।।९२।।
गोपिकादि–साक्षात्कार–हेतवे नमः।।९३।।
रुक्मिण्यादि–भक्ति–स्थापकाय नमः।।९४।।
सन्मार्ग–स्थापकाय नमः।।९५।।
वसिष्ठादि–सेवित–चरणाय नमः।।९६।।
वसुदेव–महोत्सव–कर्त्रे नमः।।९७।।
वसुदेव–ज्ञान–बोधकाय नमः।।९८।।
देवकी–मनःपीडापनोदकाय नमः।।९९।।
देवादि–भक्तशापादि–दोष–नाशकाय नमः।।१००।।
देवकी–मृतापत्य–दात्रे नमः।।१०१।।
देवकी–स्तनन्धयाय नमः।।१०२।।
भक्ताचिन्त्य–सुख–दात्रे नमः।।१०३।।
सुभद्रा–विवाह–हेतवे नमः।।१०४।।
जनकादि–ज्ञानि–मनोरथ–पूरकाय नमः।।१०५।।
श्रुतदेवाद्युपासक–सन्मार्ग–बोधकाय नमः।।१०६।।

अखिल–निगम–निजजन–संस्तुताय नमः ।।१०७।।
सर्वागम्य–स्वरूपाय नमः ।।१०८।।
ऐश्वर्यादि–षड्धर्म–स्थापकाय नमः ।।१०९।।
भक्तदुष्ट–वैभव–नाशकाय नमः ।।११०।।
भक्तसङ्कट–निवारकाय नमः ।।१११।।
वृकादि–दुष्टघातकाय नमः ।।११२।।
ब्रह्मशिवादि–वन्दित–चरणाय नमः ।।११३।।
सर्वोत्कर्ष–बोधकाय नमः ।।११४।।
विप्र–मृतापत्य–दात्रे नमः ।।११५।।
अर्जुनादि–गर्व–प्रहारकाय नमः ।।११६।।
द्वारिका–नायकाय नमः ।।११७।।
नाना–विलास–विलसित–सुखाब्धये नमः ।।११८।।
निखिल–निजजन–प्रपञ्च–विस्मारकाय नमः ।।११९।।

इत्येवं राजलीलायां नाम्नाम् अष्टादशं शतम् ।।
निरोध–लीलाम् आश्रित्य भक्त्यै भक्ते निरूपितम् ।।१।।
बाललीला–नामपाठात् श्रीकृष्णे प्रेम जायते ।।
आसक्तिः प्रौढलीलाया नामपाठाद् भविष्यति ।।२।।
व्यसनं कृष्ण–चरणे राजलीलाभिधानतः ।।
तस्मान् नामत्रयं जाप्यं भक्ति–प्राप्तीच्छुभिः सदा ।।३।।

।।त्रिविधलीलानामावली सम्पूर्णा।।